गीतिम्भरा

प्रेम शङ्कर शर्मा

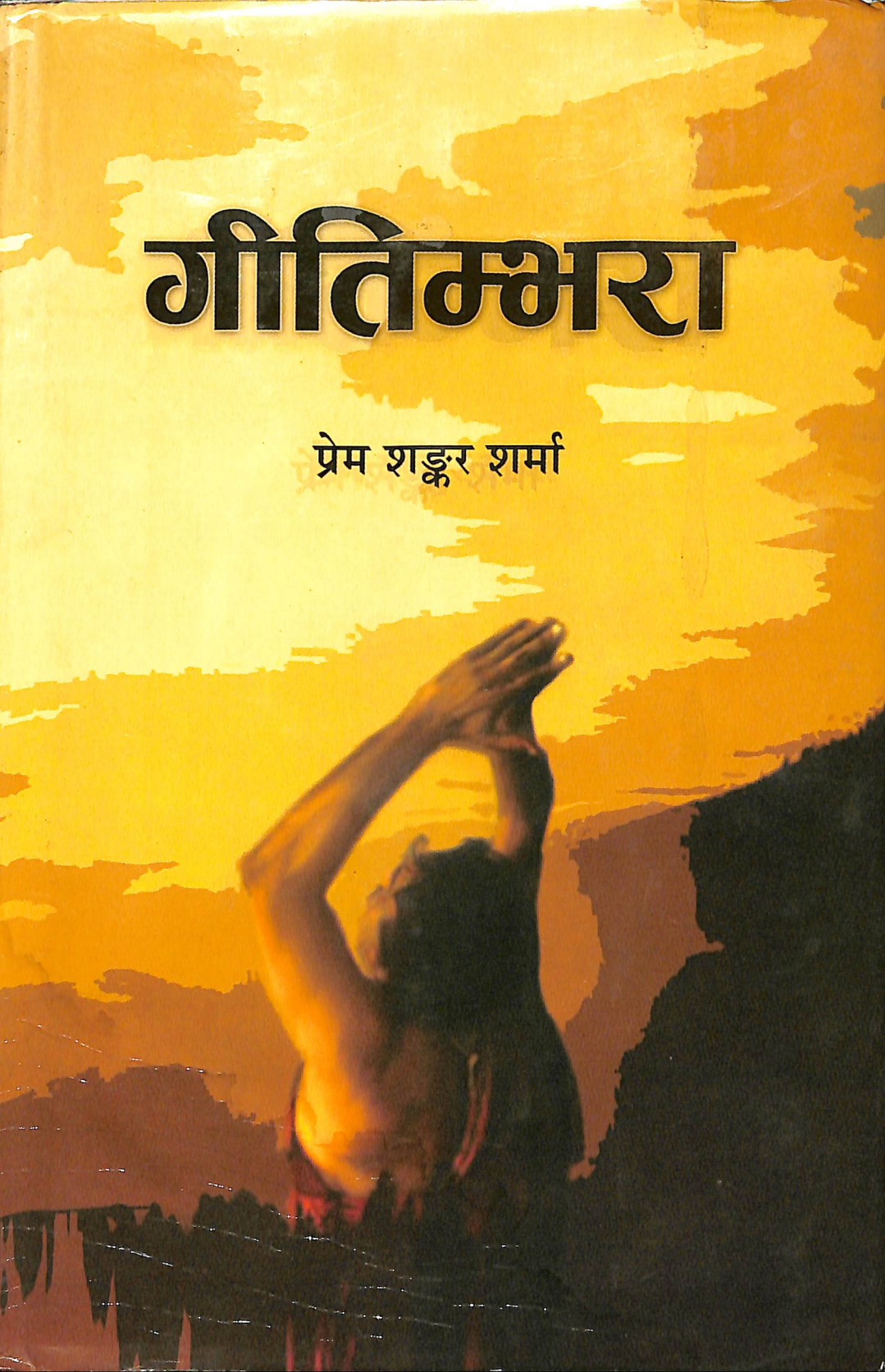

गीतिम्भरा

प्रेम शङ्कर शर्मा

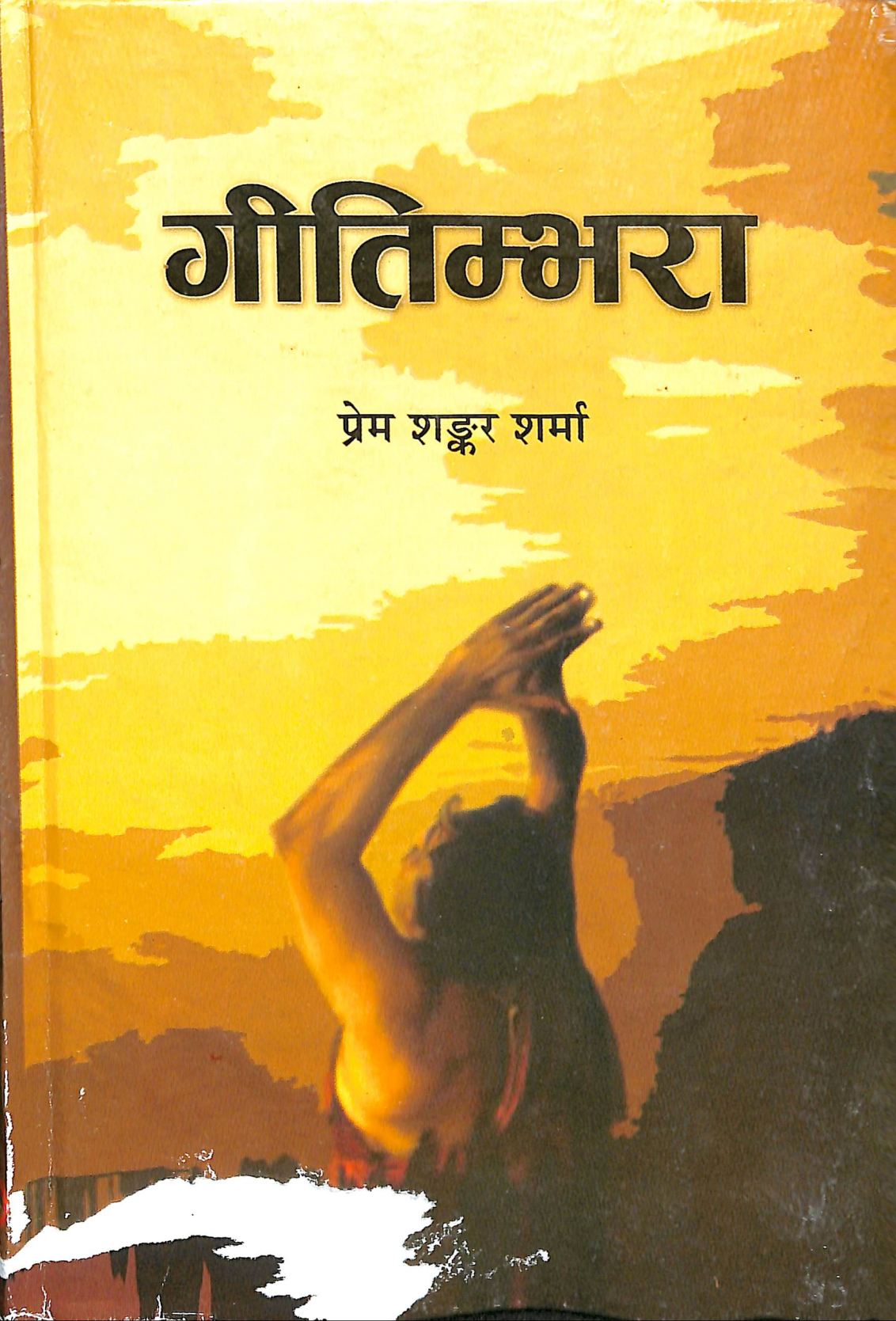

गीतिम्भरा

प्रेम शङ्कर शर्मा

मीरा पब्लिकेशन्स

49 बी / 37, न्याय मार्ग, इलाहाबाद - 211 001

ISBN : 978-81-88211-85-2

गीतिम्भरा

प्रकाशक : मीरा पब्लिकेशन्स
49 बी/ 37, न्याय मार्ग, इलाहाबाद - 211 001

संस्करण : प्रथम, 2016

मूल्य : 250.00

अक्षर संयोजन : सुपरसेट कम्प्यूटर्स

मुद्रक : **ग्राफ़िक क्रियेशन्स प्रा. लि.**
टैगोर टाउन, इलाहाबाद
मो. : 7800905512

गीतिम्भरा

श्रीमते गुरुवर्याय अभिराज राजेन्द्र मिश्राय

महाकवये सहश्रद्धया समर्प्यते

नान्दीवाक्

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण अर्जुन को समझाते हैं - हे अर्जुन! इस पृथ्वी तल पर जो कुछ भी विभूतिमत् सत्त्व है, जो कुछ भी श्रीमदूर्जित तत्त्व है, वह सब तुम मेरे ही तेज के अंश से समुत्पन्न मानो ! इसका सीधा तात्पर्य यही है कि मानव को अन्यान्य मानवों की तुलना में जो कुछ भी अतिरिक्त, अधिक अथवा विलक्षण प्राप्त है वह परमेश्वर का प्रसाद-मात्र है। विलक्षण रूप-सौन्दर्य, विलक्षण-कण्ठ, विलक्षण पाण्डित्य, विलक्षण वाग्मिता, विलक्षण कवित्व, विलक्षण शारीरिक, मानसिक अथवा आत्मिक बल - सब ईश्वरीयता की ही अभिव्यक्ति हैं।

इन विलक्षण ईश्वरीय कृपाओं में भी कवित्व सर्वोपरि है क्योंकि वह, एकमात्र वह ही, प्रतिभा-प्रसूत होता है। नवनवोन्मेष शालिनी प्रज्ञा का प्रसव होने के कारण 'कवित्व' किसी भी व्यक्ति को परिभू, स्वयम्भू एवं आत्माराम बना देता है। वह मनुष्य होते हुए भी देवकोटिक व्यक्तिव का स्वामी बन जाता है। और मनुष्य तो मात्र पाञ्चभौतिक-कार्य होते हैं। फलतः मृत्यु के अनन्तर पञ्च तत्त्वों का अपने-अपने अधिष्ठानों में विलय हो जाने के अनन्तर, मनुष्य का अस्तित्व सदा-सदा के लिये विस्मृति के गर्भ में समा जाता है।

परन्तु कवि तो होता है यशः काय! महायोगी भर्तृहरि स्वयं कहते हैं

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्तियेषां यशःकाये जरामरणजं भयम् ।।

यशःकाय तो मात्र यश से निर्मित होता है और वह यश भी आयुगान्त स्थिर होता है। अतः यशःकाय अथवा कीर्ति विग्रह कवि के जीर्ण-शीर्ण होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

मेरे परम प्रिय नैष्ठिक साहित्यव्रती, अनुजकल्प श्री प्रेमशंकर शर्मा जी उन्हीं कवियों की कोटि में आते हैं। अभी पिछले वर्ष उनकी संस्कृतगीतियों की एक संकलना गीर्गीतिः प्रकाशित हुई थी जिसका संस्कृत एवं हिन्दी-जगत के सहृदयों ने भरपूर स्वागत किया था। वह संकलन क्या निकला, मानो शर्मा जी के प्रसुप्त मन में अलसाई पड़ी कवित्व चेतना की अमर बेलि हरित हो उठी और

अब वह, मूल-विहीन होते हुए भी वनस्पतियों के विस्तार को ही आत्मसात् करती जा रही है। 'मूलविहीन' शब्द का प्रयोग में जान-बूझ कर कर रहा हूँ।

प्रेमशंकर शर्मा जी के दुर्वार कवित्व की कोई परिपुष्ट पृष्ठभूमि नहीं है। नहीं वह अध्यापक रहे हैं लम्बी अवधि तक कि उन्हें साहित्यानुशीलन का क्षण-प्रतिक्षण व्यासंग मिला हो। न ही वह ऐसे वातावरण में रहे है जहाँ निरन्तर सरस साहित्यिक चचार्यें होती रहती हैं, जो परिसर को प्रेरित एवं प्रोत्साहित करती रहती हैं। शर्मा जी एक कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी रहे हैं जहाँ 'काव्य-शास्त्र विनोद' के लिये अवसर मिलता नहीं है, अवसर खोजना पड़ता है। ऐसे वातावरण में रहते हुए कोई पं0 श्रीलाल शुक्ल जी की तरह गद्य-साधना (राग दरबारी) तो कर सकता है, परन्तु नव-रस-सिक्त काव्य-साधना नहीं। कम से कम, मेरी तो अपनी सोच यही है।

परन्तु प्रेमशंकर जी ने असंभावनाओं के उन सारे पथ-प्रत्यवायों को तोड़ फेंका और देववाणी संस्कृत में सम सामयिक विषयों पर सुमधुर गीतियाँ प्रणीत कर उन्होंने प्रयाग के सहृदय-मानस को विस्मित एवं चकित कर दिया। यह सौभाग्य की बात है कि वर्षभर के अन्तराल में ही उनकी अमृतगर्भा लेखनी से दूसरा गीत-संकलन अवतीर्ण हो रहा है।

गीर्गीतिः का पुरश्चरण है - गीतिम्भरा ! पिछली गीतसाधना में शर्मा जी ने सहम-सहम कर पाँव रखे थे। क्योंकि उन्हें धावन का आत्मविश्वास नहीं था। परन्तु अबकी बार उनका पदन्यास परिनिष्ठित एवं स्थिर है। उनका आत्मविश्वास, जो पाठकों की प्रतिक्रियाओं एवं मित्रों-सहृदयों की प्ररोचनाओंसे प्राप्त होता है, दृढ है। अतएवं गीतिम्भरा के गीतों में उनका कवि उन्मुक्तभाव से प्रकट हुआ है।

इस संकलन की अनेक गीतियाँ 'मेरे लिये' हैं। यह स्वीकार करते मुझे संकोच तो हो रहा है। परन्तु मैं क्या करूँ ? इस विषय में सर्वथा निरुपाय हूँ। मन्दिर की देहली, नैवेद्य की टोकरी लौटा तो नहीं सकती न। नैवेद्य को सिर माथे लगा लेना ही मन्दिर की नियति है। शर्मा जी का मेरे प्रति निश्छल अनुराग है, जानता हूँ। उसी अनुराग को उन्होंने वाणी दे दी। गोकि वह अव्यक्त भी रहता तो मेरी परितुष्टि में कोई कमी न आती। परमेश्वर उन्हें इस निष्ठा का सत्फल प्रदान करें, यही कामना है।

गीतिम्भरा की गीतियों में विषय-वैविध्य पर्याप्त है। यह वैविध्य, समाज को हतप्रभ एवं विषण्ण कर देने वाली उन घटनाओं के कारण भी है जो अभी हाल ही में घटी हैं। कवि तो युग-प्रहरी है। वह उन घटनाओं को अपनी संवेदना के कैन्वस में शामिल कर लेता है। एक ओर कवि की दृष्टि अपने गृहनगर अलीगढ़, कर्मस्थली प्रयाग (इलाहाबाद) तथा महानगरी मुम्बई पर केन्द्रित है तो दूसरी ओर

वह कमर तोड़ती मँहगाई तथा कोयले की दलाली से भी व्यथित है। लोकतंत्र को जीण-शीर्ण होता देख, जनप्रतिनिधि कवि विषण्ण है, वह पूछता है भ्रष्ट नेताओं से,

नो न्याय सत्यभावास्तिष्ठन्ति व्यवहारे,
किं कर्गजस्य नावा वाञ्छन्ति नदीतरणम् ?
नास्ते कर्मसु शुचिता वाण्यां नो माधुर्यम्,
हृद्भिर्हि भजन्ति न किं ते मनः कर्मवचनम् ? ।।
स्थापयति जनानङ्के किं भ्रष्टाचारनिशा ?
किं सदाचारभूमौ तेषां न भवति शयनम् ? - इङ्गालकालिमा

'मँहगाई' जैसे विषय पर आज का संस्कृत कवि किस प्रकार बोलचाल की भाषा में सर्वजन-बोधगम्य टिप्पणी कर रहा है, वह सचमुच देखने और पढ़ने लायक है। अब और कितनी सरल संस्कृत की अपेक्षा है संस्कृतद्रोहियों को ?

डीजलस्य मूल्यमेधते पुनः पुनः,
गेहनार्य एध-वायुनैव मूर्च्छिताः।।
शाक-कन्द-मूल-दुग्ध-तैल-शर्कराः
मूल्यकूर्दनाद् विभान्ति खे प्रतिष्ठिताः।।
'वस्तु-मूल्यमद्य राक्षसी' मुखायते
शासनेन कीदृशा वयं कृपान्विताः।। - महार्घता

गीतिम्भरा की गीतियाँ भरे मन से लिखी गई हैं। इनमें प्रेमशङ्कर शर्मा जी का कलापक्ष नहीं, मूलतः हृदयपक्ष ही प्रकट हुआ है। कहीं-कहीं निहायत वैयक्तिक अनुभूतियाँ भी है जो उनके अन्तर्जगत् में झाँकने का अवसर प्रदान करती हैं। इन्हें गीति की बजाय 'गज़ल' कहना उचित होगा -

बन्धुतायै न दंशनं त्यक्तम्
मित्रतायै समर्पितो न त्वम् ।।
भोजनं रोदनं तथा शयनम्
पशुः कुर्वन्न याति देवत्वम् ।।
मित्रवत्पश्य यदा कोऽपि मिलेत्
ब्रूहि मधुरं, तदेव वक्तृत्वम्
दीयते किञ्चिदपि न दीनेभ्यः
हन्त ! तेषां वृथैव धनिकत्वम् ।। - मित्रतायै

मेरे लिये इससे अधिक प्रसन्नता का विषय और क्या होगा कि मैं प्रेमशंकर जी को संस्कृत कविता के क्षेत्र में प्रतिष्ठित होता देख रहा हूँ। मेरी हार्दिक शुभकामना है कि वह इस क्षेत्र में उत्तरोत्तर आगे बढ़े तथा प्रबन्धात्मक कृतियों की सृष्टि करें। हार्दिक आत्मीयता एवं आशीः सहित

शिमला

(अभिराज राजेन्द्र मिश्र)

स्वस्त्विति प्रतिजाने

"कवते लोकहितार्थं स भवति प्रेमशङ्करः शर्मा।
कविता तस्य शुभाशीः, सा स्याल्लोकप्रसृता कौ ।।

सुरभारती सपर्यापर्यायत्वेन स्वजीवनावसरं समर्पयन्तः, प्रशासनकर्म व्यापार-प्रदत्तौत्सुक्य जन्यमनःखेद निवारणाय सारस्वत वीणा गुणरणनसुखमास्वादयन्तः पञ्चदेवोपासनोपलब्ध झङ्कृतहृद्धवीणा वादयन्तः सुरगवीस्वर विरचित-माधुरीमास्वादयन्तः संस्कृतकविसुधाकलशमुद्गिरन्तो मम विमत्रवर्या, आचार्य श्री प्रेमशंकर शर्मा महाभागाः नूनमेव वाग्देव्याः कृपाप्रसादपरिपूतान्तःकरणाः महापुरुषास्सन्ति।

त्रिवेणी महाकवेः श्री अभिराजराजेन्द्र मिश्र महाभागस्य शिष्यत्वमवाप्य संस्कृतकविताकुटुम्बे कश्चन नूतनप्ररोह इवास्य महानुभावस्य कवेः प्राकट्यमभूदिति प्रयागराजस्य कोऽपि दिव्यो महिमा कवेरस्य नैसिर्गिकं काव्यप्रवीणत्वं समुल्लसति कवितासु।

प्रादेशिक प्रशासनिक सेवायां लब्धावसरः विभिन्नेषु पदेषु दाक्ष्यम् स्वकर्म संपादनं विधाय सांप्रतमसौ सुरभारत्याः कोषसंवर्द्धनायाहर्निशं प्रयतत इति संतोषावहमस्माकं कृते।

प्रसादगुणसम्पन्ना, वैदर्भीरीतिनिर्भरा, पाञ्चाली भावसुधास्नाता, ब्रजमाधुरीनिमज्जिता कवेरस्य कविताझरी सचेतसां मनोमोदाय विच्छित्ति विशिष्टं कुक्षीकरोति। अस्य प्रथमं काव्य संकलनंमासीत् "गीर्गीतिः' तस्य, कविता आसन् तासां रसं पायं पायं संस्कृत-सहृदयाः महान्तं मुदमन्वभवन् ततः समुल्लासप्राप्तोऽयं कविः एक षष्टिरचनाभिः द्वितीयं काव्य संकलनमुपायनीकरोति 'गीतिम्भरा' इति नाम्ना।

संकलनेऽस्मिन् कुत्रचित् गुरुभक्तिः कुत्रचिद् देवभक्तिः कुत्रचित् देशभक्तिः, कुत्रचिच्च सामाजिक-समस्या-समाधानानि सम्यगवलोकयितुं क्षमन्ते सहृदयाः। पदशैय्या त्वस्य संकलनस्य प्रसादपेशला तद्यथा।

गुरो ! त्वां शंकर मन्ये
कविं वागीश्वरं मन्ये।।"

भक्तिभावस्त्वस्य गुरुं प्रति सर्वथाद्भुत एव
दृष्टि र्मे गच्छति यत्र यत्र
पश्यामि गुरुकृपां तत्र तत्र।।

ब्रजमण्डल लोकगीतानां माधुर्यं भृशं निपीतमनेन। अतएव पदे पदे त्वस्य रचनासु ब्रजमाधुरी समुच्छलति - ब्रजमण्डले गृहेषु वरवरण तिलकोत्सवसमये यद् लोकगीतं गीयते महिलाभिः

रघुनन्दन फूलेन समाँय
लगुन आई हरे हरे

अस्यानुवादः संस्कृते कीदृशो मनोहरः -

हे रघुकूलभूषण ! राम !
कृपां कुरु हरे ! हरे !
दयां कुरु जगत्पते !!

इयं मनोहरता संस्कृतकवितां पुनः जनमानसे संस्थापयिष्यति मे हृदयं दृढं विश्वसिति।

अहंसर्वान् संस्कृतसहृदयान् आह्वयामि संकलनस्यास्य सम्यक समवलोकनाय। मित्रवर्य्याः शर्म महाभागाः सदैव स्वस्थाः कुशलिनः साहित्य सेवन तत्पराः भवेयुरिति कामयमानोऽयं वानप्रस्थी प्रणवः साम्प्रतं विरमति।

विदुषामाश्रयः
इच्छाराम द्विवेदी
प्रणवः

कविकर्म की सार्थकता

संस्कृत और हिन्दी में समान अधिकार से कविता लिखने वाले प्रेमंशकर शर्मा को कवि-हृदय मिला है। जहाँ देश परिवेश और समाज के परिवर्तनों विडम्बनाओं और मूल्यों से संबद्ध एक सुनिश्चित सोच उनके पास है, वहीं उनकी सर्जना में गहरी संवेदनशीलता की उपस्थिति ध्यानाकर्षक है। उनकी गुरू विषयक रचनाएँ मध्यकालीन भक्त कवियों का स्मरण कराती है। 'सरल गुरू वह वृक्ष जैसे', 'मैं बिन्दु आप गुरु हो भास्कर' 'गुरुवर के लिए अदेय न कुछ' 'गुरु ही कराते प्रभु का दर्शन' आदि उदगारों में गुरु-महिमा के उदात्त स्वर हैं। भक्तकवियों की भाँति 'कवित विवेक एक नहिं मोरे' की प्रतिध्वनियाँ भी कई स्थलों पर हैं - 'न बुद्धि मेघा न ज्ञान मुझमें', ' नहीं कविता लेश गुरुवर', 'कवि नगण्य हूँ मैं' आदि। लेकिन सार्थक कविता के लिए जरूरी प्रामाणिक परिवेश बोध और परिवेश की प्रामाणिकता से छन कर निथरा सकारात्मक सोच, गहन संवेदनशीलता, संप्रेषण-सक्षम भाषा, बिम्बग्रहण कराने में सक्षम अभिव्यंजना की दृष्टि से अधिकतर कविताएँ आश्वस्त करती हैं।

ये कविताएँ पाठकों जिन अनुभतियों और जीवनसत्यों को साझा करती हैं वे जीवनमूल्यों से पुष्ट और समर्चित है। 'छोड़ डसना तू', 'बंधुता के लिए', 'अगर जिन्दगी हो बिना प्रेम के' 'निस्काम कर्म करना सदैव वांछित है', 'शिव सुंदर सत्य को भजेगा। 'जीवन में आनंद मिलेगा' आदि में जो संदेश है वह वर्तमान अमानवीयकरण और अवमूल्यन के दौर में बहुत मूल्यवान् है। 'ईश सुधारें राष्ट्र-दशा' में सर्व जनहिताय और लोकमंगल का जो भाव सांश्लिष्ट है, वह भी कविताओं को प्रांसगिक और पठनीय बनाने में सक्षम है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के वर्चस और बाजारवाद के दुस्प्रभावों के मध्य मनुस्यता के क्षय को देखते हुए इन मूल्यनिष्ठ कविताओं का महत्व असंदिग्ध और स्वयंसिद्ध है। अतः साहित्यजगत् में इन कविताओं का स्वागत अवश्य किया जाएगा।

डॉ0 वेदप्रकाश अमिताभ

संपादक - अभिनव प्रसंगवश

अभिमतम्

अस्मांक प्रेम-स्नेहास्पदं श्री प्रेमशङ्कर शर्मा न केवलं संस्कृत भाषां प्रत्यनुरागशीलः अपितु संस्कृतभाषा रचनायामपि परमप्रवीणो वर्तते आश्चर्यं त्वेतद्यत् संस्कृतपाठशालासु महाविद्यालयेषु वा संस्कृतमनधीयानोऽपि सः संस्कारवशात् संस्कृतज्ञाने विदुषोऽप्यतिवर्तते।

विविधसामयिक विषयानधिकृत्य ''गीर्गीति' प्रणेता श्री प्रेमशंकरःशर्मा संस्कृतज्ञानां स्नेहभाजनं जातः। अस्यां 'गीगीर्ति' रचनायां 'देवार्पणं, देशार्पणं, लोलार्पणं, लोकार्पणमेतेषु चतुर्षुशीर्षकेषु प्रविभज्यसः विविधानां धार्मिक-राजनीतिक-समस्यानां कुरीतीनामनाचाराणाञ्चोद्घाटनमकरोत् ।

राजकीय-प्रशासनधिकार-संपन्नः, राजकार्येषु अत्यन्तं व्यापृतोऽपि श्री शर्मा एतेनैव सन्तोषं नाध्यगच्छत्। अतस्तेन सेवानिवृयनन्तरमेकषष्टि वर्षपूर्त्यवसरे केवलं स्वान्तः सुखाय 'गीतिमभरा' नामिका एकषष्टि पद्यात्मिका रचनापि संस्कृतज्ञानामानन्दप्रदायिका लोकार्पणीकृता।

श्री प्रेमशङ्करस्य कवित्वमवलोक्य ध्वनिकारोक्तिमिमां स्मरामि

सरस्वती 'स्वादु तदर्थवस्तु निःस्यन्दमानामरतां कवीनाम् ।

अलोक सामान्यमभिव्यनक्ति परिस्फुरन्तं कवितावशेषम् ।।

आशासे यत् श्री प्रेमशंकरः शर्मा एवमेव संस्कृतभाषा कोष समृद्धिं क्रियमाणोऽस्मान् मोदयिष्यते।।

डा0 श्री निवास मिश्र
पूर्व विभागाध्यक्ष
संस्कृत विभाग
धर्म समाज
महाविद्यालय, अलीगढ़

आत्मिकी

प्रेमशंकर शर्मा ने 'गीर्गीतिः' के माध्यम से संस्कृत काव्य जगत् में पदार्पण किया था। प्रथम रचना होने के बावजूद भी वह प्रौढ़ ही कही जायेगी। एक तो प्रशासनिक अधिकारी और उस पर भी पश्चिम वय में काव्य स्फुरण, विस्मय तो उत्पन्न करता है, किन्तु रचना इतनी पक्व है कि उन्हें किसी मुरव्वत की ज़रूरत नहीं है। हिन्दी में तो विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, शोध संस्थानों से इतर अनेक प्रशासनिक अधिकारी, प्रबन्ध विशेषज्ञ, अभियन्ता एवं अन्य रचनाधर्मी सर्जनक्रिया में प्रवृत्त हैं, पर संस्कृत में यह प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अत्यल्प है। ऐसे में प्रेम शंकर शर्मा की कृतियाँ स्वागतार्ह हैं। श्री शर्मा कुछ उन गिने-चुने रचनाकारों में से एक हैं जिन्होंने जीविकोपार्जन एवं स्वधर्म में सदैवभेद किया है। यही कारण है कि संस्कार एवं अभ्यास के बल पर वे आज द्वितीय रचना 'गीतिम्भरा' से संस्कृत काव्य संसार को समृद्ध कर सके।

श्री शर्मा निर्मल हृदय हैं और यह नैर्मल्य उनके काव्यों में बहुत स्फुटित हुआ है। गुरु के प्रति उनकी अखण्ड आस्था अप्रतिम है, वह भक्ति की कोटि तक पहुँच गयी है। प्रस्तुत संकलन की अनेक रचनायें इस बात का प्रमाण हैं। श्रद्धेय गुरूवर्य प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी के प्रति उनकी श्रद्धा सर्वातिशयिनी है और निश्चय ही वे 'बहूनामेमि प्रथमः' हैं।

एक अच्छी बात यह है कि शर्मा जी की कवितायें पढ़ने के लिये बहुत समय निकालने की आवश्यकता नहीं है। उनकी छोटी-छोटी कवितायें पल भर में ही बड़ी बात कह जाती हैं। 'गीतिम्भरा' की आदि कविता गुरूविषया -रति का उत्कृष्ट उदाहरण है -

गुरो ! त्वां शङ्करं मन्ये।
कविं वागीश्वरं मन्ये।।
अहं केवलमिदं जाने।
प्रणेष्यसि मां शुभस्थाने।।

कहीं-कहीं कवि गुरुभक्ति में इतना रम गया है कि स्त्रोत्र-पाठ जैसा करने लगता है -

अद्यापि वर्तते त्वयि भगवन् ! प्रगाढ़निष्ठा

विद्वद्वरेषु चास्ते ते स्थानमपि विशिष्टम
त्वं वर्षशतं जीवेः कीर्तिं किरन् यथावत्
कविकामना मदीया, न भवेत्कदापि कष्टम् ।।

गुरुविषयक सविस्तर मङ्गलाचरण के अनन्तर कवि का ध्यान भारतीय संस्कृति के दो प्रमुख तत्त्वों - गाय और गङ्गा की ओर जाता है और वह उनकी अद्यतनी दुर्दशा से आहत हो उठता है -

किन्तु हा! तेऽस्माभिदुःखिते
मातरौ सन्तप्ते शङ्किते।
तयोः किं शृण्मो वयं न रावौ ?

कवि की यह पीड़ा 'राष्ट्रे शीर्षक कविता में और घनीभूत हो गयी है, जहाँ भिन्न-भिन्न शास्त्रकारों द्वारा दी गयी राज्य-संचालन की व्यवस्था का लागू न होना और निरन्तर अनेक घोटालों का होना, उसे उद्विग्न करता है। अस्तु, शर्मा जी की 'गीतिम्भरा' सरल, सहज एवं आडम्बरहीन है और प्रायः भावध्वनि का सुन्दर निदर्शन हैं प्रत्येक कविता के हिन्दी रूपान्तर से काव्यप्रेमियों के लिये प्रस्तुत रचना सुगम हो गयी है।

शर्मा जी निःशेषजाड्यापहा माँ भगवती की आराधना में इसी प्रकार तत्पर रहें, इस शुभकामना के साथ

डॉ0 आनन्द कुमार श्रीवास्तव
एसोशिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
सी.एम.पी. डिग्री कालेज
(इलाहाबाद विश्वविद्यालय)
इलाहाबाद

डॉ० राजेन्द्र त्रिपाठी 'रसराज'
एसोसिएट प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद डिग्री कालेज
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

निवास -
'रसराज निवास'
2-ए/1, मिन्टोरोड, इलाहाबाद
पिन - 211002
ई-मेल rasrajkaushambi@gmail.com
मो0 09415645722

अभिव्यक्ति

गुरु गिरा से निःस्यूत "गीतिम्भरा" यह शीर्षक, अभिज्ञान है उस भक्ति का, अभिधान है उस श्रद्धा का जिसकी प्रेरणा से प्रेरित हुए गीतकार श्री प्रेमशंकर शर्मा ने अपनी नैसर्गिक कवित्व प्रतिभा से प्रसूत एकसठ संस्कृत गीतों को हिन्दी गीतानुवाद सहित संकलित कर संगुम्फित किया है। एक वर्ष के ही अन्तराल में शर्मा जी की यह दूसरी कृति वस्तुतः वागदेवी की महती अनुकम्पा का साक्षात् निदर्शन है। इसके पूर्व "गीर्गीतिः" का प्रकाशन अपने आप में आश्चर्य और आकस्मिक रूप में प्रस्फुटित हुई प्रतिभा का प्रत्यक्ष परिणाम अनुभव किया गया है।

गुरु-ज्ञान कब, कैसे, किसे और किस रूप में प्राप्त हो सकता है इसके उदाहरण हैं आदरणीय शर्मा जी। गुरु-ज्ञान के लिये आवश्यक नहीं कि किसी गुरु से कक्षा में बैठकर ही अध्ययन किया जाय। गुरु प्रतीक है निर्मल आस्था का, अटूट विश्वास का और अपरिमित श्रद्धा का। पत्थर में भगवान रहते हैं यह विश्वास है, आस्था है और श्रद्धा है। व्यक्ति के भीतर भी एक ऐसा मन-मन्दिर होता है, जिसमें प्रतिष्ठापित किसी श्रद्धेय गुरु अथवा आराध्य ईश्वर की छवि का साक्षात्कार कर लिया जाता है। अन्तरात्मा का ज्ञान ही सच्चा गुरु-ज्ञान है और वही ईश्वर का साक्षात्कार है।

शर्मा जी के विषयम में यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी होगी कि वह इसी प्रकार के गुरु ज्ञान के अधिकारी हैं। अभिराज प्रो0 राजेन्द्र मिश्र जी से विद्यार्थी के रूप में कक्षा में बैठकर भले ही उन्होंने संस्कृत विषय की पढ़ाई नहीं कि किन्तु अपनी कवित्व प्रतिभा का प्रेरक गुरु मानकर जिस तन्मयता से संस्कृत भाषा में गीतों की संरचना करने का प्रयास किया है। वह वास्तव में किसी भी ऐसे संस्कृत जीविकोपार्जन सेवी विद्यार्थी अपना अध्यापक को सस्मित करने वाला अवश्य है। जिसे कक्षा में संस्कृत पढ़ने और पढ़ाने का निरन्तर सुअवसर प्राप्त होता रहे और जिसे शर्मा जी के प्रेरणा गुरु से साक्षात् पढ़ने और

सान्निध्य में बने रहने का भी सौभाग्य मिलता रहा हो। शर्मा जी को पूज्य गुरुवर्य से सम्पर्क कराने का माध्यम मैं ही बना था। उनके प्रथम साक्षात्कार में ही शर्मा जी की निष्ठा, भक्ति और श्रद्धा एकलव्य की साधना सिद्ध हुई और वह उन तमाम अभिराज शिष्यों को दर किनार करती हुई संस्कृत गीतों की संरचना करने और गुरु-गरिमा का गुणगान प्रस्तुत करने में बहुतायत अग्रसर हो गई।

'गीतिम्भरा' प्रमाण है उस गुरु भक्ति का जिसमें शर्मा जी ने गुरु जी को केन्द्र में रखकर लगभग सत्रह-अठारह गीतों में गुरु गौरव के प्रति अपनी काव्य प्रणामाञ्जलि निवेदित की है। प्रशासनिक सेवा में रत रहते हुए अवकाश ग्रहण के अन्तिम वर्ष में उनकी सारस्वत साधना संस्कृत संरचना के रूप में प्रस्फुटित हुई और उन्होंने उस साठ-वर्ष को लक्ष्य बनकर षष्टि सम्पूर्ति के निमित्त साठ संस्कृत गीतों को हिन्दी गीतानुवाद सहित "गीर्गीति" शीर्षक से प्रकाशित कराया। उसी के बाद एकसठवें वर्ष में प्रवेश करते हुए ही संस्कृत गीतों की संरचना में उन्मुक्त भाव से संलग्न हो गये। अपनी प्रशासिक सेवाओं की व्यस्तता को उन्होंने संस्कृतभाषा की सेवा में क्रियान्वित करते हुए एक सकारात्मक सोच को सुसमृद्ध किया और स्वतन्त्र रूप से अपने अनुभूत अनुभवों को संस्कृत एवं हिन्दी गीतों की रचनाओं में निर्बाध गति से संग्रहीत करने लगे। उसी का प्रतिफल है यह 'गीतिम्भरा' जिसमें एकसठ गीतों को संगुम्फिल किया गया है।

संस्कृत गीतों को ही हिन्दी में रूपान्तरण करना उनकी कृतियों की महती विशेषता है। इससे संस्कृत भाषा से अपरिचित व्यक्ति भी हिन्दी गीतों के माध्यम से उनके गीतों का सहज रूप में आस्वादन प्राप्त कर सकता है। उनके संस्कृत गीत भी इतने सरल और व्यवहारिक हैं कि कोई भी व्यक्ति सरलता से उनका भाव समझ सकता है।

'गीतिम्भरा' का श्री गणेश गुरो ! शीर्षक की कविता से किया गया है। इसमें गुरू को शंकर, वागीश्वर, गुणाकर ज्ञान-सिन्धु, जड़ता-हारक, ब्रह्मक्षर, प्रेम अग्रेतर जैसी विशेषताओं से श्रीमण्डित किया गया है।

गुरा ! त्वां शङ्करं मत्ये,
कविं वागीश्वरं, मन्ये।।

इसके बाद गुरूवर्य के गृह जनपद जौनपुर का वर्णन करते हुए गुरू को दिवाकर, यत्र-तंत्र, गुरूवाणी, गुरूवर ! जय ! जय ! वन्दे, रक्षासूत्रम, भास्करः, राजेन्द्र मिश्रः, सदगुरूत्वम् कृपा सिन्धो !, कृपान्वितोऽहम् , ध्यायं दयायम् विद्याभण्डारम् श्री राजेन्द्रम् , शकरत्वम् जेसे शीर्षको द्वारा गुरू जी के प्रति अपनी काव्याञ्जलि प्रस्तुत की गई है।

गुरू वन्दना के पश्चात् शर्मा जी ने गंगाधारा का गायन करते हुए

पंरशोमनम् शीर्षक की कविता में महिर्ष परशुराम की महिमा का गुणगान किया है। गोगो शीर्षक की कविता में गाय और गंगा दोनो की पवित्रता का प्रदर्शन किया है।

पवेते धरणिं गंगा-गावौ।
तयोः पावन्योः पुण्यस्वभावौ।

इस प्रकार हृदय मन्दिर, श्री गोवर्द्धनम्, गंगामाता, राधा कृष्णों हे कृष्ण, राधा-स्तुति, ओंकारम् , राधा कृष्ण, रघुकुलभूषण राम, कृष्णनर्तनम, अम्बिके, राधे, रगिणी, हरे मुरारे, गौरी, वीणावादिनी, मुरलिका, राधा धारा, हे गौरी पुत्र, परमपिता, गणेशम् श्रावणी जैसे गीतों में अपने आराध्य देवी, देवताओं की भी स्तुति, स्मरण एवं संस्तवन प्रस्तुत किया है।

अपनी सेवा स्थली प्रयाग भूमि को स्मरण करते हुए शर्मा जी ने प्रयाग से बिछुडने का दर्द भी बयॉ किया है।

दूर संगम से हटकर के क्या जिन्दगी
हाय ! सेवा से निपट कर क्या जिन्दगी

उनके संस्कृत गीतों में हिन्दी गज़ल जैसी अनुभूतियों को भी देखा जा सकता है।

सामाजिक विसंगतियों के प्रति भी कवि का चिन्तन दर्शनीय है। अद्य का प्रस्थिति इस कविता में कवि की राष्ट्रप्रेम भी जागृत हो उठता है।

अद्य का प्रस्थितिर्दृश्यते दुर्गतिः?
नैव जाने गता कुत्र तेषां मतिः ?
युध्यते भारते भ्रष्टता-दानवः
क्लेदयत्यद्य सर्वान् कदर्थार्णवः
लोकनीया भवेन्मंगला परिणतिः।

राष्ट्र दुर्दशा का उपचार कैसे सम्भव है इस पर भी कवि की दृष्टि द्रव्टव्य है -'

अस्ति मनसि उपचारः किम्
अस्मिन् वसति विकारः किम्
व्यजति न निन्द्यं व्यापारम्
भजति न किं सर्वाधारम
नायं प्रेमाधारः किम् ?

कवि का हृदय वात्सहय भी घर की किलकारियों से आहलादित हो उठता है और वह राघवी कविता में अपना आमोद व्यक्त करता है

शैशवे प्राशने राजते राधवी
सर्वदा जीवने काशते शाम्भवी।

भीषण गर्मी का ताप भी कवि नहीं सहन कर पाता और उसकी बाणी कह उठती है

आतपशाला विकराला रे।
हो गता कुत्र धनमाला रे

भारतराष्ट्रो भारतदेश, राजनीति, राष्ट्रे जैसे गीतों में राष्ट्र प्रेम की भावनाओ को समाहित किया गया है।

कीडाजगत में सचिन जैसे बल्लेबाज को भी कवि नहीं भूलता कवि का निश्छल मन उसे भी स्मरण करता हुआ, सचिन के शतकों का गुणगान प्रस्तुत करता है '-

कन्यातः कश्मीरं खलु गुर्जराच्च कटकम्
सम्प्रति गुञ्जति गगने शतकानामिह शतकम्

इस प्रकार शर्मा जी ने अपनी जन्मभूमि अलीगढ़ को याद करते हुए, गाँव के किसान को भी अपनी गीतों में समाहित किया है। मुम्बई की समृद्धि और वहाँ की कला - कौशल को भी स्मरण करते हुए कवि ने अपनी दृष्टि से मुम्बई को देखने का प्रयास किया है। देश की सामयिक परिस्थितियों का अवलोकन कराते हुए कोयला भ्रष्टाचार जैसे चर्चित घटनाओं को भी रेखांकित किया है।

अन्त में शर्मा जी की इस सारस्वत साधना को हृदय से प्रणाम करते हुए पराम्बा भगवती माँ वागदेवी से प्रार्थना करता हूँ कि शर्मा जी की इस संस्कृत सपर्या को नितय को निरन्तर निखारती रहे और उनकी कीर्ति - कौमुदी अभिरात शिष्य को यदि उसकी कोई भी किरण स्पर्श कर सके तो स्वयं को सौभाग्यशाली बना सकूँ यही ईश्वर से शुभकामना है।

24/08/2015

आत्मनिवेदनम्

मङ्गलपुष्पम्

गणपते ! विघ्नहर्तः ! विद्या-विवेक-सिन्धो !
हृत्पूरय शब्दसुमैः, स्याद् येन सुधा-सुषमा ।। 1।।
देवाधिदेव ! शम्भो !, हे ! देवि ! भवानि ! शिवे !
कविकलां प्रकाशयतां, काव्ये स्यादकालिमा ।। 2।।
वीणापाणे ! शुक्ले !, ब्रह्मज्ञानाधारे !
वादय हृदये वीणां, भूयाद्धि भावभरिमा ।। 3।।
सृष्टौ सर्वत्र शिवो, राजते महादेवः
संसार एव रमते, शिवसहिता मातोमा ।। 4।।
सामान्ये मयि न गुणाः गणपते ! प्रसीद त्वम्
कस्तूरी काव्यमयी, मेधा स्यान्मनोरमा ।। 5।।
वाणी स्यादलङ्कृता, विकसेत्तस्यां वंशी,
दिव्योर्जा हृदये स्याज्जायेत विचारोष्मा ।। 6।।
हृदि निवसेद् वाग्देवी, वृत्तयः सन्तु विमलाः
सञ्चरतु भावधारा, कल्याणी पुण्यतमा।। 7।।
कृतकृत्यं कुरु कृष्ण ! दत्वा मे काव्यकलाम्
मोहन्या चन्द्रिकया, दूरं स्यादपूर्णिमा ।। 8।।
हनुमन् ! ललामकाय ! बलबुद्धिभक्तिदातः !
त्वां विना कदापि हि मे, संभूयते न वरिमा ।। 9।।

हे ! पितः ! स्वर्गवासिन् ! सर्वदा कृपां कुरुषे,
तव शङ्करेण नाम्ना, प्राप्यते मया महिमा।। 10।।
अर्प्यते मया गुरवे, लेखनी-पुष्प-माला
राजेत शम्भुकृपया, गीतिम्भरामञ्जिमा ।।11।।

गौरवपुष्पम्

संस्थाप्य गुरुं हृदये, नत्वा ब्राह्मीं देवीम्
गुरुदेवकीर्तिकेतोर्गीयते मया गरिमा ।। 12।।
भास्कर उदेति प्रातःकाले विकिरत्याभा,
गुरुकृपया गीर्गीतिः प्रकटिता कृतिः प्रथमा ।। 13।।
कारितः प्रयागाद्वै, सेवया निवृत्तोऽहम् ,
आश्रित्य गुरोर्वाणीं, मत्कृतो यत्नलघिमा ।। 14।।
अभिराजो राजेन्द्रो, मिश्रो हिमालयो वै,
लेखन्या काव्यगुरुं, तं प्रणमति मे तनिमा।। 15।।
अभिराजे राजन्ते, बहुमानाः काव्यगुणाः
लेखन्या मया कथं, तेषां सम्भवा प्रमा ? ।। 16।।
लेखकः कथाकारो, वक्ता प्रख्यातकविः
संस्कृत-साहित्य-कृषौ, चकते कविहरित्तमा ।। 17।।
मानसे तु गीर्देवी, भाषायां सरस्वती,
गीतेषु सोमधारा, शब्देषु सिद्धिरणिमा ।। 18।।

"गीतिम्भरा" शोभते, गुरुयशोगानयुक्ता,
मानसे काशते मे, जीवनी गुरोः प्रतिमा ।। 19।।
क्षिप्तोऽहं स्वयं मया, दुस्तरे काव्यजलधौ,
बलयिष्यति बलहीनं, मां गुरोरेव बलिमा।। 20।।
ध्यायन् श्रीगुरदेवं, प्रयते तु यथाशक्तिम्
सफलाःस्युर्मे यत्नाः, दूरे वै क्लमाःभ्रमाः ।। 21।।

सौरभपुष्पम्

राधावल्लभो महान् , विद्वदवरस्त्रिपाठी,
संवर्तते इदानीं, संस्कृतखे यथाऽर्यमा।। 22।।

शोभयति राजधानीं, दीपयति देववाणीम् ,
श्रीरमाकान्तशुक्लो, यस्येरा महत्तमा ।। 23।।
इच्छारामः प्रणवो, विद्वद्वानप्रस्थी
दिल्ल्यां राजते कविः, कविता तस्यानुपमा ।। 24।।
मित्रं विद्वान्सं तं, नत्वा वदामि सत्यम्
प्रेरणा तदीया मे, देवी वर्तते उमा।। 25।।
यस्मिन् श्रियो निवासः संस्कृत-पूर्वाध्यक्षे
तस्मै वर्तते सदा, हृदयेभक्तिर्द्रढिमा।। 26।।

विदिता खल्वलीगढ़े, वेदप्रकाशगुरुता,
आलोचकस्य हिन्द्याः, विमलामिताभधरिमा ।। 27।।
हरिदत्तः पूर्णकविः, संस्कृतभाषाविदुषाम्
प्राध्यापकः प्रयागे, प्रीतिर्मयि सदोत्तमा।। 28।।
श्रीवास्तव आनन्द, उर्मिला तस्य भार्या,
दम्पत्योर्वर्तन्ते, विद्यासंस्कृतिक्षमाः ।। 29।।
पाण्डेयो जनार्दनो, मणिदीपः प्रकाशते,
गुरुवरविद्वच्छिष्यो, न प्रज्ञा तेन समा।। 30।।
राजति राजेन्द्रवौ, रसराजरूपरेखा
वाण्यां वीणापाणिर्मुखमण्डले मधुरिमा।। 31।।
मित्रं वदामि धन्यं, प्रीतिं तस्मै च दधे,
तेनैव कृता कविना, मे सहायता चरमा।। 32।।
ते धन्यवाद-योग्याः यैः कृता कृपावर्षा
दास्यन्त्याशीः मह्यं, सर्वे ये पितृसमाः ।। 33।।
विद्वान्सो वर्तन्ते, मयि कृतोपकारास्ते,
प्रणमामि तान्तु सर्वान् तेषामति परिश्रमाः ।। 34।।
नु सतीशचन्द्रयतिते, साहित्यक भाण्डारे
श्रीअग्रवालमहिते, मुद्रणशुचिता परमा।। 35।।

श्री विभोर अग्रवालो, दायत्वे सचेतनः
"गीतिम्भरा" - मुद्रणे, विद्यते पुण्यकर्मा ।। 36।।

गुरुवरगणपतिकृपया, मित्राणामपि विदुषाम्
पूर्णाशीर्वादैर्वै , प्राप्तो हि मया सरिमा।। 37।।
गीतिम्भराप्रदीपास्ते गुरुस्नेहयुक्ताः
दास्यन्ति सुशीतलतां, शान्तिं सर्वे सहिमाः ।। 38।।
गुरवे गौरवदीपैर्विभवे वैभवदीपैः
शिवदीपैरन्तरतः, दूरं प्रयातु जडिमा ।। 39।।
शान्तिः सर्वत्र भवेदपि विश्वमङ्गलं स्याद्
"गीतिम्भरा" तथेच्छति, शङ्करः प्रेम शर्मा।। 40।।

1 जनवरी 2016 - प्रेम शङ्कर शर्मा

अनुक्रम

गुरुवन्दना	25
जौनपुर में	27
दिवाकर	29
जहाँ जहाँ	31
गुरुवाणी	33
गुरुवर ! जय ! जय !	35
आचार्य	37
रक्षा बन्धन	39
काव्येश्वर	41
श्री राजेन्द्र मिश्र	43
सद्गुरुत्व	45
कृपासिन्धु	47
कृपान्वित	49
अभिराज गुरुजी	51
विद्या - भण्डार	53
गुरुगाथा	55
शङ्करत्व	57
गंगा धारा	59
महर्षि परशुराम जी	61
गाय और गंगा	63
हृदय	65
गिरि गोवर्धन महाराज	67
गंगा मैया	69
राधे ! कृष्णा !	71
कृष्णावतार	73
राधा - स्तुति	75
शिव	77
राधा व कृष्ण	79
हे ! रघुकुलभूषण राम !	81
कालिय-मर्दन	83

अम्बे !	85
राधे !	87
रङ्गिणी	89
हे ! मुरारे !	91
उमा	93
वीणा वादिनी	95
मुरलिका	97
राधा भक्ति	99
हे ! गणपति	101
परमात्मा	103
गणेश	105
मित्रता दिवस पर	107
श्रावणी	109
प्रयाग से हटकर	111
दुर्दशा	113
उपचार	115
राघवी	117
आतपशाला	119
भारत राष्ट्र	121
भारत देश	123
राजनीति	125
राष्ट्र में	127
शतकों का शतक	129
जीवन	131
महंगाई	133
किसान	135
अलीगढ़ नगर	137
पण्डित	139
मुम्बई	141
कालिमा	143
संस्कृतम्	144

गौरवदीपाः

गुरुवन्दना

गुरो! त्वां शङ्करं मन्ये।
कविं वागीश्वरं मन्ये ।। 1 ।।
अहं केवलमिदं जाने,
प्रणेष्यसि मां शुभस्थाने,
गुणानामाकरं मन्ये ।। 2 ।।
प्रतीक्षे ते हि सन्देशम् ,
दधे नो कवि-कला-लेशम् ,
भवन्तं सागरं मन्ये ।। 3।।
विना त्वां लेखनी रुद्धा,
त्वया मे मतिर्वै शुद्धा,
जगज्जडताहरं मन्ये ।। 4।।
अहं क्षुद्रोऽस्मि जीवात्मा,
प्रेरयसि मां सुकाव्यामा,
गुरुं ब्रह्माक्षरं मन्ये ।। 5।।
प्रभो ! तप्तोऽस्मि तृषितोऽहम् ,
समाप्तं कुरूहापोहम् ,
निधीनां निर्झरं मन्ये ।। 6।।
चलस्यग्रे हि मार्गे मे,
रतोऽसि त्वं च मे क्षेमे,
'प्रेम' ते त्वनुचरं मन्ये ।। 7।।

गुरुवन्दना

हे गुरो ! शंकर तुम्ही हो ।
काव्य-वागीश्वर तुम्हीं हो ।।1।।
यही केवल जानता हूँ,
मैं प्रणेता मानता हूँ,
गुणों के आकर तुम्हीं हो ।।2।।
नहीं कविता लेश गुरुवर,
दीजिये संदेश गुरुवर,
ज्ञान के सागर तुम्हीं हो ।।3।।
शुभ्रता से बुद्धि भर दो।
लेखनी गतिशील कर दो,
जगत-जड़ता-हर तुम्हीं हो ।।4।।
क्षुद्र हूँ मैं जीव-आत्मा,
प्रेरणा दो कवि-महात्मा,
गुरो! ब्रह्माक्षर तुम्हीं हो ।।5।।
प्रभो! मैं हूं तप्त-प्यासा,
हरो मम दुविधा निराशा,
सर्व-निधि-निर्झर तुम्हीं हो ।।6।।
तुम्हीं रखते ध्यान मेरा
आपसे कल्याण मेरा,
प्रेम-अग्रेतर तुम्हीं हो ।।7।।

जौनपुरे

माता धन्या चैव धरित्री धन्या धन्यस्तातः ।
गुरुर्मे जौनपुरे सञ्जातः ।। 1 ।।
त्वमासीर्मेधावी छात्रो, विद्यालयेऽवदातः ।। 2।।
तथा प्रयागे प्राप्य सुशिक्षां, प्राध्यापकोऽभिजातः ।। 3।।
लोकविश्रुतं तव पाण्डित्यं, कविर्गुरुर्विख्यातः ।। 4।।
शिमलायां त्वं वससि यत्र वै, गन्धर्वश्च किरातः ।। 5।।
काशीकुलपतिपदमलमकरोः साक्षाद्विभाप्रपातः ।। 6।।
धन्योऽहं यत्त्वयैव गुरुणा, कृपावारिणा स्नातः ।। 7।।
कविरविणा त्वयैव चानीतः, काव्ये नवप्रभातः ।। 8 ।।
प्रचोदयति मां कविता वाणी, ते जीवन-वृत्तान्तः ।। 9 ।।
प्रेमशङ्करः स्मरति निशिदिनं, नमति च सायं प्रातः ।। 10 ।।

जौनपुर में

धन्य आपकी माता धरती, धन्य पिता श्रीमान।
जौनपुर गुरु का जन्म स्थान ।।1।।
छात्र रहे मेधावी विद्यालय में पाया ज्ञान ।।2।।
ऊंची शिक्षा पा प्रयाग में प्राध्यापक धीमान ।।3।।
लोक प्रसिद्ध विद्वत्ता गुरु की, कविवर आप महान ।।4।।
शिमला वास हिमाचल का है सुन्दर नगर प्रधान ।।5।।
संस्कृत विद्यापीठ बनारस के कुलपति विद्वान ।।6।।
धन्य हुआ गुरुवर्य कराया कृपा-वारि से-स्नान ।।7।।
श्रीगुरु कवि दिनेश लाये संस्कृत में नया विहान ।।8।।
गुरु की कविता जीवन वाणी हैं मुझको वरदान ।।9।।
करे प्रेम शंकर झुक निशिदिन गुरुवर का गुणगान ।।10।।

दिवाकरः

गुरुचरणकमले नमामि।
गुण-ग्रामान् कीर्तयामि ।। 1।।
गुरुर्मे महतामुदारः,
कविः कुलकः कथाकारः,
अहं तं भक्त्या भजामि ।। 1।।
दिवाकर इव महादीपः,
सागराणामन्तरीपः,
पतङ्गं स्वकमनुभवामि ।। 2 ।।
वटः सफलः सरलतायाः,
मया प्राप्ता कृपाच्छाया,
नाधिकं सत्यं वदामि।। 3 ।।
पातु काली गिरा कमला,
भवेन्मेधा मे च विमला,
गुरौ सर्वं लोकयामि ।। 4।।

दिवाकर

गुरु चरण-शतपद्म वंदन ।
सद्गुणों का सतत कीर्तन ।।1।।
गुरु महोदय हैं हमारे,
सुकवि लेखक श्रेष्ठ प्यारे,
सदा हूँ मैं, भक्ति-भाजन ।।2।।
दिखाऊँ रविदीप कैसे?
सागरों में द्वीप जैसे,
मूढ़मति मैं हुआ चेतन ।।3।।
सरल गुरु वट वृक्ष जैसे,
मिला छाया-पक्ष जैसे,
सत्य मेरा कथन वर्णन ।।4।।
करे रक्षा गिरा कमला,
बुद्धि काली करे विमला,
गुरु तुम्हीं में सर्व-दर्शन ।।5।।

यत्र यत्र

दृष्टिर्मे गच्छति यत्र यत्र।
पश्यामि गुरुकृपां तत्र तत्र ।। 1।।
कथयानि कथं गुरुमाहात्म्यम् ?
वाणी न समर्थेदं सत्यम् ,
क्षुद्रस्तिष्ठति कस्तदा कुत्र ? ।। 2 ।।
आगतः प्रयागे धन्योऽहम् ,
पवते सङ्गमे तु जलामृतम्
गुरुकृपा ममोपरि भवत्यत्र ।। 3।।
माघे मासे गङ्गामेला,
पुण्यानां कल्पवासखेला,
द्रष्टुं शक्या न छटेतरत्र ।। 4।।
हे मनः ! सदा स्मर गुरुमन्त्रम् ,
नाशयति विकारं षड्यन्त्रम् ,
सन्मित्रं तव गुरुरस्ति मित्र ! ।। 5 ।।

जहाँ जहाँ

जाती हैं नजरें जहाँ-जहाँ ।
गुरुकृपा देखता वहां-वहां ।।1।।
क्या कहना गुरुमाहात्म्य बड़ा!
वाणी असमर्थ व कर्म कड़ा,
मैं क्षुद्र ठहरता कौन कहां? ।।2।।
आया प्रयाग में सफल रहा,
संगम जल पावन विमल रहा,
पाई श्री गुरु की कृपा यहां ।।3।।
प्रति वर्ष माघ गंगामेला
आती है कल्पवास वेला,
अद्‌भुत होती है छटा यहां ।।4।।
गुरुमन्त्र जपा कर मन! मेरे,
षड्यन्त्र विकार मिटें तेरे,
गुरु जैसे सच्चे मित्र कहां ? ।।5।।

गुरुवाणी

गुरुवाणी प्रखरा मुखरा।
कल्याणीयं दोषहरा ।। 1।।
यदेच्छाम्यहं रचनायै,
कविं प्रेरयति कवितायै,
हृदयं पवते निरन्तरा ।। 2।।
निष्कासयति मनोदोषान् ,
प्रवेशयति च मनसि मोदान् ,
एषा धारा पुण्यपरा ।। 3।।
मङ्गलमूर्ति र्गुरुमूर्तिः,
यत्प्राप्यते तया स्फूर्तिः,
साऽऽस्ते परमा शान्तिकरा ।। 4।।
स्निग्धा वाणी सरस्वती,
ओजस्सलिला वेगवती,
संस्करोति हृदयानि वरा।। 5।।
रसवर्षिणी पुनीते गौः,
सर्वान् तारयतीयं नौः,
मधुस्यन्दिनी वाङ्मधुरा ।।6।।
मामातनोति गुरोर्भक्तिः,
तया तता कविताशक्तिः,
तस्मै गीतिर्मृदुस्वरा।। 7।।
बुद्धिञ्चैव न जानामि,
कविः कीदृशः कथयामि ?
वर्षति मयि सा 'प्रेम' झरा ।। 8 ।।

गुरुवाणी

प्रखर मुखर गुरुवाणी है ।
यह दोषहरा कल्याणी है ।।1।।
जब होती है रचना-इच्छा,
मिलती प्रेरणामयी शिक्षा,
उर पावन करता प्राणी है ।।2।।
मन के दोषों को दूर करे,
मम मन-मानस में मोद भरे,
पावन धारा सी वाणी है ।।3।।
मंगलकारी गुरु मूर्ति सदा,
देती मुझको संस्फूर्ति सदा,
अति शान्तिप्रदा यह वाणी है ।।4।।
स्निग्धा है सरस्वती जैसी,
गंगा है वेगवती वैसी,
वन्द्या गुरु संस्कृत वाणी है ।।5।।
गौरस-वर्षा पावन करती,
नौका समान तारण करती,
मधु जैसी मीठी वाणी है ।।6।।
गुरुभक्ति मुझे दृढ़ करती है,
मुझमें कवितागुण भरती है,
अर्पित गुरु को मम वाणी है ।।7।।
मम बुद्धि-विवेक-विधान नहीं,
कवि कैसा कुछ भी ज्ञान नहीं?
करते वर्षा गुरु दानी हैं ।।8।।

गुरुवर ! जय ! जय !!

गुरुवर! जय जय, प्रभुवर ! जय जय।
मामुद्धारय, कविवर ! जय जय ।।
तिमिरो गहनः, न स्थिरं मनः,
विद्या - विवेक - विरहितो जनः
नाशय तिमिरं, हे। ज्योतिर्मय ! ।। 1।।
विमला न मतिः, सरला न गतिः,
अज्ञाने मोहे, तमसि रतिः,
मम मेधाशक्तिं परिवर्धय ।। 2।।
भाषाधारः, शुचितासारः,
विद्यते न मयि, सत्संस्कारः,
कृपया मूढं मां परिमार्जय।। 3।।
वन्द्या वरणीया गुरुभक्तिः,
लभ्या हि तया कविताशक्तिः
आश्रयोऽसि मे त्वं हे अव्यय! ।। 4।।
शून्योऽहं तव कविता-सिन्धो !,
विन्दुं प्रकाशयसि तिग्मांशो !
मृल्लोष्टं शोधय संस्कारय।। 5।।
प्रेमास्ति तवेदं कृपाश्रितम् ,
ते पुण्यं शरणं मया चितम् ,
तारय मां दीनं विस्तारय ।। 6।।

गुरुवर ! जय ! जय !

गुरुवर जय हो जय हो । जय हो!
उद्धारक कविवर की जय हो ।।1।।
गहरा तम भीतर चंचल मन,
विद्या-विवेक विरहित है जन,
प्रभु तिमिर हरो ज्योतिर्मय हो ।।2।।
मति विमल नहीं, गति सरल नहीं,
मोहित अज्ञानी सफल नहीं,
मेधा विकसित शुभ आशय हो ।।3।।
शुचि भाषा भाव-विचार नहीं,
कोई ऊचे संस्कार नहीं,
मेरा मार्जन करुणालय! हो ।।4।।
मुझको वन्द्या गुरुभक्ति मिली,
उससे ही कविताशक्ति मिली,
मेरे आश्रय गुरु अव्यय! हो ।।5।।
मैं शून्य आप कविता-सागर,
मैं विन्दु आप गुरु हो भास्कर,
मैं ढेला तुम अमृत-मय हो ।।6।।
गुरुवर का सदा कृपाश्रित हूं,
शरणागत हो लाभान्वित हूं,
सब दूर दीन का संशय हो ।।7।।

आचार्यः

त्रेतायुगे त्ववन्दत, रामो यथा वसिष्ठम् ।
वन्देऽभिराजमिश्रं, राजेन्द्रं गुरुवरिष्ठम् ।। 1।।
आचार्यो वर्तते स्म, वर्षाणि संस्कृतस्य,
मन्येऽहं तमध्यक्षं, तत्वज्ञं ब्रह्मनिष्ठम् ।। 2।।
व्याकरण-शास्त्र-विद्वान् पारङ्गतोऽपि वेदे,
शक्नोमि न विस्मर्तुं विद्यार्थिनां तमिष्टम् ।। 3।।
अद्यापि वर्तते त्वयि भगवन् ! प्रगाढ़निष्ठा,
विद्वद्वरेषु चास्ते ते स्थानमपि विशिष्टम् ।। 4।।
त्वं वर्षशतं जीवेः, कीर्तिं किरन् यथावत् ,
कविकामना मदीया, न भवेत्कदापि कष्टम।। 5।।
यत्काव्य-कला-कर्मणि, मां सक्रियं करोषि,
आशीर्वदेर्वसेन्मयि तत्प्रेम दयाविष्टम् ।। 6।।

आचार्य

त्रेता में राम करते, वन्दन वसिष्ठ का ।
वैसे ही मै भी करता, गुरुवर वरिष्ठ का ।।1।।
आचार्य रहे वर्षों, संस्कृत के आप श्रीमन् ,
करता हूं मान मैं भी, गुरु ब्रह्मनिष्ठ का ।।2।।
वेदज्ञ, सुकवि, ज्ञानी, व्याकरणशास्त्रवेत्ता,
सम्भव नहीं भुलाना, छात्रों को इष्ट का ।।3।।
बहुतों की आज भी है, गुरु में प्रगाढ़ निष्ठा,
ऊँचा है स्थान उनके, आसन विशिष्ट का ।।4।।
शत वर्ष जियें गुरुवर! फैले सुकीर्ति यों ही,
न कदापि आपको हो, आभास कष्ट का ।।5।।
कविकर्म में किया है, सक्रिय मुझे निरन्तर,
आशिष दें सदा शुभ हो, मुझ 'प्रेम' शिष्ट का ।।6।।

रक्षासूत्रम्

प्रेरणया ते कवयामि गुरो।।
पगुः सन्नपि व्रजामि गुरो ! ।। 1।।
इच्छामि भवेन्मधुरा भाषा,
गुरुकृपा मिलेदित्यभिलाषा,
त्वामेव सदैव भजामि गुरो ! ।। 2।।
अर्हसि संस्कर्तु मां तु जडम् ,
वन्देऽहं नित्यं गुरुं मृडम् ,
कवितासागरे तरामि गुरो ! ।। 3।।
त्वत्कीर्तिकीर्तनं मम प्रियम् ,
तेनैव मार्जये सदा धियम् ,
त्वच्छायायां निवसामि गुरो ! ।। 4।।
रक्षासूत्रं मङ्गलसूत्रम् ,
सर्वं पावयेद् द्विजं शूद्रम् ,
श्रद्धाबन्धे बध्नामि गुरो ! ।। 5।।

रक्षा बन्धन

गुरुप्रेरित कविता करता हूँ ।
होकर भी पंगु विचरता हूँ ।।1।।
इच्छा है मधुमय भाषा हो,
गुरु कृपा मिले अभिलाषा हो,
गुरु भजन सदा ही करता हूं ।।2।।
करता वन्दन मैं गुरु-मृड का,
संस्कार करेंगे मुझ जड का,
कविता सागर में तरता हूं ।।3।।
मुझको गुरुकीर्तन प्यारा है,
गुरुवर का मुझे सहारा है,
कीर्तन से नित्य संवरता हूं ।।4।।
मंगलमय है रक्षाबन्धन,
इससे तन मन होता पावन,
श्रद्धाबन्धन गुरु करता हूं ।।5।।

कला काव्यसाहित्यश्रीः

मदीयो गुरुर्भास्करः ।
विभात्येव शोभाकरः ।। 1।।
हिमद्रिर्यथा शोभते,
तथा राजते श्रीकरः ।। 2।।
अगाधः समुद्रो यथा,
गुणानां समासो नरः ।। 3।।
मतिर्यस्य तारायते,
कला-ज्ञान-गङ्गाधरः ।। 4।।
कवीशोऽभिराजो गुरुः,
कवीनामहं किङ्करः ।। 5।।
बुधाः सन्ति ये संस्कृते,
स विद्वत्सु हस्ताक्षरः ।। 6।।
प्रप्रश्ना अनेके यदा,
गुरुर्देव एकोत्तरः ।। 7।।
ऋषेर्वा कवेर्वन्दनम्
कलौ वर्तते द्वापरः ।। 8।।
कला-काव्य-साहित्य-श्रीः,
स राजेन्द्रमिश्रो वरः ।। 9।।
मम 'प्रेम' पुष्पायते,
स पुष्णाति मां शङ्करः ।। 10।।

काव्येश्वर

गुरुवर भास्कर मेरे।
अति शोभाकर मेरे ।।1।।
शोभित जैसे गिरिवर,
वैसे श्रीकर मेरे ।।2।।
जैसे अगाध सागर,
गुण-रत्नाकर मेरे ।।3।।
वह ज्ञान-कला-मति के,
गुरु गंगा-धर मेरे ।।4।।
मैं कवियों का किंकर,
गुरु काव्येश्वर मेरे ।।5।।
संस्कृत विद्वानों में,
गुरु हस्ताक्षर मेरे ।।6।।
जो प्रश्न अनेकों हैं,
गुरु हैं उत्तर मेरे ।।7।।
वन्दन कवि का ऋषि का ।
कलि में द्वापर घेरे ।।8।।
राजेन्द्र मिश्र गुरुजी,
श्रीवर कविवर मेरे ।।9।।
उर प्रेम-पुष्प पुष्पित,
गुरुवर शंकर मेरे ।।10।।

श्री राजेन्द्र मिश्रः

गुरुर्वन्द्यते वन्दनाभिः ।
मया प्रार्थ्यते प्रार्थनाभिः ।। 1।।
नमः श्रीमते मङ्गलाय,
गुरुर्गीयते सामगाभिः ।। 2।।
गुरोरस्ति गुर्वी महत्ता,
सदा पूज्यते भावनाभिः ।। 3।।
अदेयं न किञ्चित्तु गुरुणा,
प्रभुः प्राप्यते तत्कृपाभिः ।। 4।।
गुरुर्मेऽस्ति राजेन्द्रमिश्रः,
तमर्चाम्यहं गीतिकाभिः ।। 5।।
विधत्ते शुभेच्छां मदर्थे,
नमाम्येव तं मालिकाभिः ।।6।।
महिम्नाऽभिभूतो जनोऽहम् ,
मनो रंजये व्यञ्जनाभिः ।। 7।।
गुरुप्रेमवर्षाः मदीये,
स्वकं शोधये चापि ताभिः ।। 8।।

श्री राजेन्द्र मिश्र

करता हूं मैं गुरु का वन्दन ।
सौ बार प्रार्थना अभिनन्दन ।।1।।
मङ्गलकर! नमस्कार मेरा,
वन्दन गीतों का है गायन ।।2।।
महती है महत्ता गुरुवर की,
करता हूँ सदा भाव-पूजन ।।3।।
गुरुवर के लिए अदेय न कुछ,
मैं बनूं गुरु कृपा भाजन ।।4।।
राजेन्द्र मिश्र अभिराज गुरो!
करता मैं कीर्तन गीतार्चन ।।5।।
आपकी शुभेच्छा सदा मुझे,
मेरा है कविता माल्यार्पण ।।6।।
महिमा से मैं अभिभूत गुरो!
व्यंजना करे मन का रंजन ।।7।।
करती है अन्तः करण शुद्ध,
गुरु-प्रेम-कृपा-वर्षा पावन ।।8।।

सद्गुरुत्वम्

सद्गुरुत्वं मया वन्द्यते वन्द्यते
तन्महत्त्वं सदा नन्द्यते नन्द्यते ।। 1।।
अद्य सर्वे विजानन्तु वार्ताहराः !,
सज्जनत्वं मया गण्यते गण्यते ।। 2।।
सोऽभिराजो हि राजेन्द्रमिश्रः कविः,
सत्कवित्वं यदा धन्यते धन्यते ।। 3।।
तेन संस्कारितं संस्कृतं वाङ्मयम् ,
लेखकत्वं नवं जन्यते जन्यते ।। 4।।
वाहिता काव्यधारा नवा संस्कृता,
तन्नवत्वं बुधैर्भण्यते भण्यते ।। 5।।
गीतिका चेद् गलज्जालिका संस्कृते,
सा सुरत्वप्रदा वर्ण्यते वर्ण्यते ।। 6।।
तेन राजेन्द्र मिश्राभिराजेन वै,
ग्रन्थनत्वं महत् तन्यते तन्यते ।। 7।।
चिन्तनं लेखनं सत्कवित्वं परम् ,
अव्ययत्वं मया नम्यते नम्यते ।। 8 ।।
तस्य शिष्यः सदा प्रार्थयेऽहं गुरुम् ,
काव्यतत्त्वं मया पठ्यते पठ्यते ।। 9 ।।
सद्गुरुञ्चैव वागीश्वरीं ध्यायता,
प्रेमतत्त्वं सुहृन्मन्यते मन्यते ।। 10 ।।

सद्गुरुत्व

सद् गुरुत्व ही परम वन्द्य है ।
गुरु की महिमा गेय नित्य है ।।1।।
वार्ताहर अब सभी जान लें,
सज्जनता ही अग्रगण्य है ।।2।।
श्री राजेन्द्र मिश्र कविवर का
सत्कवित्व तो धन्य धन्य है ।।3।।
संस्कृतवाङ्मय संस्कारित कर,
लेखकत्व नव विधा अन्य है ।।4।।
नई काव्य धारा संस्कृत की
आप बहाई सर्वमान्य है ।।5।।
संस्कृत गीत गजल शेरों में
नई ज्योति दी वह अवर्ण्य है ।।6।।
श्री राजेन्द्र मिश्र कवि द्वारा
ग्रन्थसृजन अद्भुत अनन्य है ।।7।।
उनका चिन्तन लेखन कविता,
अव्ययता क्षमता प्रणम्य है ।।8।।
गुरुवर का मैं शिष्य अकिंचन,
काव्यतत्व पढ़ धन्य धन्य है ।।9।।
वाग्देवी सद्गुरु को ध्याऊँ,
प्रेमतत्व सन्मित्र मान्य है ।।10।।

कृपासिन्धो !

गुरुं त्वां नौमि कृपासिन्धो !
सुधां देहि प्रकाशमिन्दो ! ।। 1 ।।
त्वदीयं नन्दति सुभाषितम् ,
त्वया मच्चित्तं प्रकाशितम् ,
मदीयो ध्यान-केन्द्र-विन्दो ! ।। 2।।
भ्रमेन्नो मनस्तथा बुद्धिः,
कृपादृष्ट्या भाव्या शुद्धिः,
कृपालो ! मित्र ! सखे ! बन्धो ! ।। 3।।
भवेयं चिन्तनशीलोऽहम् ,
स्रजनधर्मी गतिशीलोऽहम् ,
विकारान् हर प्रज्ञाचुञ्चो ! ।। 4।।
न तिष्ठेयुर्देशेऽनार्याः,
मया भारतसेवा कार्या,
शुभं स्यात्स्थानमिदं हिन्दोः ।। 5।।
मया गुर्वी वाणी गेया,
त्वया मह्यं मेधा देया,
मनोज्ञा निर्मलता किन्नो ! ।। 6।।
प्रवन्द्येयं भारतमाता,
धरेयं विश्वे विख्याता,
प्रकाशय प्रेम ज्ञानेन्दो ! ।। 7।।

कृपासिन्धु

नमस्ते गुरो! कृपा सिन्धो।
प्रकाशामृत दे दो इन्दो! ।।1।।
आपके वचन सुहाते हैं,
चित्त मेरा चमकाते हैं,
आप मम ध्यान केन्द्र बिन्दो! ।।2।।
बुद्धि मन भ्रमित न हों मेरे,
शुद्ध हों कृपादृष्टि प्रेरे,
कृपालो! मित्र! सखे! बन्धो! ।।3।।
सदा मैं चिन्तन-शील रहूं,
सृजन धर्मी गतिशील रहूं,
विकारों को गुरुदेव! हरो ।।4।।
देश यह आर्यों की धरनी,
मुझे भारत सेवा करनी
विश्व में भारत वन्दित हो ।।5।।
गेय गुर्वी है शुचि वाणी,
बुद्धि दो बन जाऊं ज्ञानी,
मानसिक निर्मलता भी हो ।।6।।
वन्द्य अपनी भारत माता,
विश्व में धरती विख्याता,
प्रकाशित फिर हो ज्ञानेदो ! ।।7।।

कृपान्वितोऽहम्

कृपान्वितोऽहं कवयामि कविताम् ।
गुरुं नमामि प्रणमामि गुरुताम् ।। 1।।
अवर्णनीया हि गुरोर्महत्ता,
गुरुं तु सन्तं प्रणमामि संस्थाम् ।। 2।।
गुरुर्हि येन प्रदर्शितो यत् ,
प्रभुर्गुरुर्वै नमामि प्रभुताम् ।। 3।।
गुरुर्वसति सच्छिष्यस्य हृदये,
मधुस्वराय प्रणमामि मधुताम् ।। 4।।
कविर्नवीनो नाहं प्रवीणो,
नमामि नवतां गुर्वीं प्रवणताम् ।। 5।।
भजामि वाणीं हित्वा कृपणताम्,
लभै सफलतां कृपां निपुणताम् ।। 6।।
ऋणं त्वदीयं गुरो ! ममोपरि,
विकासय क्षमतां मे प्रखरताम् ।। 7।।
न बुद्धि-मेधा-ज्ञानानि सन्ति,
तथापि याचे 'प्रेम' प्रचुरताम् ।। 8।।

कृपान्वित

गुरूकृपा से करता, मैं कविता ।
महान गुरु हैं महती है गुरुता ।।1।।
गुरु की महत्ता, कहना न सम्भव,
प्रणम्य गुरुवर, प्रणम्य संस्था ।।2।।
गुरु ही कराते, प्रभू का दर्शन,
गुरुदेव प्रभु हैं, प्रणम्य प्रभुता ।।3।।
बसते हैं गुरु शिष्य के हृदय में,
प्रणम्य गुरु की वाणी की मधुता ।।4।।
कवि भी नया हूँ, कुशल नहीं हूँ,
प्रणम्य नवता गुरु की प्रवणता ।।5।।
सरस्वती को भजता निरन्तर,
मुझे सफलता मिले निपुणता ।।6।।
गुरुकृपा अब है मेरे ऊपर
बढ़ेगी क्षमता तथा प्रखरता ।।7।।
न बुद्धि मेधा न ज्ञान मुझमें,
दे दो मुझे प्रेम की प्रचुरता ।।8।।

ध्यायं ध्यायम्

अभवमहं गीर्गीतेर्गाता, पावनवचनं पायं पायम् ।
बुद्धिर्मे विमला सञ्जाता, श्रीगुरुदेवं ध्यायं ध्यायम् ।। 1।।
आत्मा प्रकाशितो गुरुणैवं, सरस्वती पवते मे हृदयम् ,
संस्करोति मामज्ञं ज्ञाता, हितोपदेशं दायं दायम् ।। 2।।
नाहं पूर्वं काव्यमकरवं, यतोहि शयितो निद्राग्रस्तः ,
उद्बोधयति हि गुरुर्विधाता, कर्णं प्रध्मायं प्रध्मायम् ।। 3।।
कृतोपकारः श्रीगुरुदेवः, निद्रा तन्द्रा भ्रान्तिरशान्तिः,
मनसः क्लान्तिर्दूरे याताः, गुरुगङ्गायां स्नायं स्नायम् ।। 4।।
आशीर्वादं सदा कामये, गुरो! प्रसीद प्रसीद भगवन् !
भवेल्लेखनीयं विख्याता, तव महिमानं गायं गायम् ।। 5।।
सिद्धिदात्रीं वन्दे गौरीं वाणीं शिवां भवानीं कालीम् ,
सिद्धिं दास्यति दुर्गामाता, भक्तिं तस्याः, धायं धायम् ।। 6।।
श्रद्धाभक्तिप्रेमत्रिवेणी गुरुदेवाय वहति मे हृदये,
अभिराजो मे भवति त्राता, हर्षे तोषे ज्ञायं ज्ञायम् ।। 7।।

अभिराज गुरुजी

अमृत वचनों को पी पी कर, गीर्गीति को हूं मैं गाता ।
श्री गुरुवर को ही ध्या ध्या कर, विमल बुद्धि को हूं मैं पाता ।।1।।

गुरु ने जो कर दिया प्रकाशित, सरस्वती है बसती अन्तर में,
हितोपदेशों को दे दे कर, गुरु ने मुझे बनाया ज्ञाता ।।2।।

नहीं मैं पहले करता था कविता, सोता था निद्रा में बेसुध
इन कानों में फूंक फूंक कर, मुझे पढ़ाते हैं गुरु विधाता ।।3।।

उपकार मुझ पर गुरुदेव जी का, दूर अशान्ति गुरु कृपा से,
गुरु गंगा में नहा नहा कर, निद्रा तन्द्रा दूर भगाता ।।4।।

मैं मांगता हूं आशीष गुरु का, प्रसन्न हों गुरु प्रसन्न भगवन् !
गुरु जी की महिमा गा गा कर, बने लेखनी यह विख्याता ।।5।।

भजता हूं गौरी वाणी को, सिद्धि दात्री शिवा भवानी,
अम्बा, काली, दुर्गा माता, सिद्धि मुझे देगी गणमाता ।।6।।

मेरे हृदय बहा करती गुरु, श्रद्धा भक्ति प्रेम त्रिवेणी,
हर्ष और संतोष प्रदाता, गुरु अभिराज बने हैं त्राता ।।7।।

विद्याभाण्डारम्

गुरुं विद्याभाण्डारं, सदा संस्मरामि।
कृपालोर्व्यवहारं, हृदाऽहं नमामि ।। 1।।
गुरुर्वर्तते यद्दयालुर्मदीयः,
सदावन्दनीयस्तथा पूजनीयः
कवीन्द्रश्रृङ्गारे स्रजं तां सृजामि।। 2।।
स साहित्यधर्मी गुरुः काव्यसेवी,
कृपां त्वयि कुरुते सरस्वती देवी,
करिष्यसे उद्धारं, शिरसा भजामि।। 3।।
कृपाप्रेरितोऽहं भवन्तं ह्युपासे,
मार्गामि किञ्चित्त्वदीये प्रकाशे,
कवीनामुदारं महान्तं श्रयामि।। 4।।
विजयते रविः कथयामि सत्यमेव,
प्रकाशाय, भानुर्गुरुर्देव एव,
गुणानामागारं, हृदये धरामि।। 5।।
यदा वर्तते स तदाश्रयस्तु कस्य,
कामये ह्यहेतुकीं कृपां प्रेम तस्य,
गुरोराभारं सदा प्रकटयामि ।। 6।।

विद्या - भण्डार

सदा स्मरण करता, मैं गुरुवर विद्याभण्डार को ।
नमस्कार करता हूँ मैं, कृपालु के सद्व्यवहार को ।।1।।
गुरु अन्तर में दया पसारे,
वन्दनीय हैं पूज्य हमारे,
गीतमालिका बना रहा हूँ गुरुवर के श्रङ्गार को ।।2।।
काव्य और साहित्य प्रणेता,
प्राध्यापक, लेखक, अध्येता,
मैं भजता हूँ शीश झुकाकर अपने ही उद्धार को ।।3।।
विचरण मेरा कृपाकाश में,
खोज रहा कुछ गुरु प्रकाश में
अपना आश्रय सदा मानता गुरुवर परम उदार को ।।4।।
भास्कर अंधकार हरते हैं
गुरुवर उर प्रकाश करते हैं,
हृदयक्षेत्र में धारण करता, गुणगण के आगार को ।।5।।
गुरु से भिन्न न अन्य सहारा,
मैं चाहता कृपा की धारा
प्रेम सदैव प्रकट करता है गुरुवर के आभार को ।।6।।

गुरुगाथा

अभिराजमहं वन्दे, मिश्रं श्री राजेन्द्रम् ।
सम्प्रति विश्वस्मिन् तं संस्कृतभाषाकेन्द्रम् ।। 1।।
विद्यते मदर्थे या प्रीतिश्च कृपा महती,
काव्यार्घ्यं देयमतो गीतिभिर्गुरुञ्चन्द्रम् ।। 2।।
नश्यति लेखनीतृषा लिख्यते गुरोर्गाथा,
हृदयस्य क्षुधा तृप्ता नत्वर्षिं ज्ञानेन्द्रम् ।। 3 ।।
सा सरस्वती तुष्यति वीणा झङ्कृतोरसि,
प्रणमामि यदा गीत्या प्रीत्या तं मेधेन्द्रम् ।। 4।।
लिख्यते मया कविता, शुचि संस्कृतभाषायाम् ,
गणनाथः प्रसीद्यवै कुरुते मां निस्तन्द्रम् ।। 5।।
अज्ञेन यदा क्रियते ह्यारम्भः कवितायाः,
गौरी-गौरीशौ मे दृढयतस्तदा स्कन्धम् ।। 6।।
विद्येते गुरुमूर्तौ पश्यामि सस्मितौ तौ,
दत्वोर्जां कुर्वाते सोर्जं मां निस्पन्दम् ।। 7।।
गुरुवरकृपया हि लभे शब्दार्थभावभाषाः ,
नाशयति गुरुः सर्वं तत् प्रेम-मनो-द्वन्द्वम् ।। 8 ।।

गुरुगाथा

राजेन्द्र मिश्र गुरुवर का, मैं सदा करूं वन्दन ।
संस्कृत जगती करती, उनका शत अभिनन्दन ।।1।।
महती है कृपा सदा गुरुप्रीति तथा मुझ पर,
काव्यार्घ्य हेतु उनके, गुणगीतों का सर्जन ।।2।।
गुरु गाथा लिखूं मिटे, यह प्यास लेखनी की,
मिट जाती उदर क्षुधा, करके साष्टाङ्ग नमन ।।3।।
प्रेम से प्रणाम करूं, मेधेन्द्र गुरू को मैं,
वाग्देवी उर मेरे, करती वीणा-वादन ।।4।।
कविता लिखता ज़ब मैं, शुचि संस्कृत भाषा में,
देते ऊर्जा मुझको, खुश हो गौरी-नन्दन ।।5।।
अज्ञानी मैं करता कविता प्रारम्भ कभी
गौरी महेश करते, हैं मेरा संवर्धन ।।6।।
गुरुमूर्ति में मुझे तो, दिखते सस्मित दोनों,
मुझ शक्तिहीन में वे, करते ऊर्जा स्पन्दन ।।7।।
गुरु से मिलते मुझको, शब्दार्थ, भाव, भाषा,
गुरु सदा दूर करते हैं, द्वन्द्व मनः क्रन्दन ।।8।।

शिवदीपाः

शङ्करत्वम्

शङ्करत्वं मया वन्दितम् ।
राम-तत्वं सदा पूजितम् ।। 1।।
सन्ति सर्वात्मना ब्रह्मजाः,
मानवत्वं न किं सेवितम् ? ।। 2।।
गौश्च गौरीसुगङ्गागिरः,
पूजने किन्न तासां हितम् ? ।। 3।।
विश्ववन्द्यास्ति नः संस्कृतिः ,
जीवनं किन्न सत्संस्कृतम् ? ।। 4।।
ते हि गोपाल ! गोवर्धनम् ,
पूजनीयं सदा निश्चितम् ।। 5।।
कृष्ण आस्ते हृदां कर्षकः
किन्न वृन्दावनं रक्षितम् ? ।। 6।।
त्यागभावो भवेज्जीवने,
तच्छिवत्वं सदा चर्चितम् ।। 7।।
वृक्षहीनाः नगाः विकृताः,
पर्वतत्वं कषाखण्डितम् ।। 8 ।।
जाह्नवीसूर्यजे पूजिते,
तर्हि किं तज्जलं दूषितम् ? ।।9 ।।
'प्रेम' तत्कृष्णराधायते,
प्रेम किं मन्यते निन्दितम् ? ।। 10।।

शङ्करत्व

शङ्करत्व वन्दित है जग में ।
रामतत्व पूजित है जग में ।।1।।
सभी ब्रह्म अंशी जीवात्मा,
मानवत्व सेवित है जग में ।।2।।
गौ गौरी वाणी गङ्गा के,
पूजन ही में हित है जग में ।।3।।
संस्कृत हो जीवनधन सब का,
विश्ववन्द्य संस्कृति है जग में ।।4।।
गोवर्धन गोपाल! तुम्हारा,
पूजनीय निश्चित है जग में ।।5।।
हृदयों में कृष्णाकर्षण हो,
वृन्दावन रक्षित हो जग में ।।6।।
त्याग भाव है परमावश्यक,
शिव शिवत्व चर्चित है जग में ।।7।।
वृक्ष हीन पर्वत विकृत हैं,
पर्वतत्व खण्डित क्यों जग में ? ।।8।।
पूजनीय गंगा-यमुना हैं,
किन्तु सलिल दूषित क्यों जग में ? ।।9।।
राधा कृष्ण प्रेम परिपूरक,
किन्तु प्रेम निन्दित क्यों जग में? ।।10।।

गङ्गा धारा

प्रवहति नित्यं रे ! धारा गङ्गायाः ।
पवते सत्यं रे ! धारा गङ्गायाः ।। 1।।
हिमगिरिजा गङ्गा, पार्वत्यास्तु समाना,
गीतानि च गायन्तः कवयस्तस्याः नाना,
पवनं कृत्यं रे ! धारा गङ्गायाः ।। 2।।
गच्छति धावन्ती, गं गं गायन्ती,
मार्गे सवेषामार्तिं श्रण्वन्ती,
कुरुते नृत्यं रे ! धारा गङ्गायाः ।। 3।।
श्रव्या गङ्गायाः गाथाऽवतारिणी,
सा जटाशङ्करी त्रयतापहारिणी,
जाने तथ्यं रे ! गङ्गाधारायाः ।। 4।।
मानवाः समूहे, स्नान्ति हि गङ्गायाम् ,
तेषां संस्काराः, सर्वे गङ्गायाम् ,
नन्वपि चित्यं रे ! गङ्गाधारायाम् ।। 5।।
निर्मात्यपि कुम्भं, यमुनां तु मिलित्वा,
सङ्गमे प्रयागे, पापौघान् जित्वा,
स्नानं दिव्यं रे ! गङ्गाधारायाम् ।। 6।।
माघे मेलायां, गङ्गां सेवन्ते,
तत्रार्घ्यं दत्वा, सर्वे मोदन्ते,
शशिमादित्यं रे ! गङ्गाधारायाम् ।। 7।।

गंगा धारा

हर पल बहती रे! गंगा की धारा ।
पावन करती रे! गंगा की धारा ।।1।।
गंगा पूज्या है, जगती ने माना,
उसके गीतों को, गाते कवि नाना
कल कल करती रे! गंगा की धारा ।।2।।
यह दौड़ी दौड़ी गं गं गाती है,
आरति को सुनती है, स्नान कराती है,
नर्तन करती रे! गंगा की धारा ।।3।।
ब्रह्मा के घर से यह धरा उतरती,
ये जटा शंकरी तापों को हरती,
मङ्गल करती रे! गंगा की धारा ।।4।।
स्नान हेतु गंगा पर यूथों में आते,
गंगा पर सारे, संस्कार कराते,
तारण करती रे! गंगा की धारा ।।5।।
यमुना से मिलकर सङ्गम होता है,
कुम्भ यहां भू पर, अघ को धोता है,
अघ मल हरती रे! गंगा की धारा ।।6।।
सब कल्पवास में गंगा तट रहते हैं,
माघ माह में वहु, कष्टों को सहते हैं,
पातक दहती रे! गंगा की धारा ।।7।।

परं शोभनम्

पर्शुरामस्य वृत्तं, परं शोभनम् ।
नौमि पुरूषार्थमित्रं, परं शोभनम् ।। 1 ।।
वर्तते शम्भुशिष्यस्य तेजोमयम् ,
जीवनं तत्पवित्रं, परं शोभनम् ।। 2।।
पितृभक्तस्तपस्वी, यती युद्धविद्,
सुदृढ़ं तच्चरित्रं, परं शोभनम् ।। 3।।
भगवता तेन शौर्येण संस्थापितम् ,
नो हि शीर्षेषु छत्रं, परं शोभनम् ।। 4।।
जन्मदाता पिता सेवितव्यः सदा,
संस्मरामैव मन्त्रं, परं शोभनम् ।। 5।।
प्रीतवाचा हृदा चेतसा कर्मणा,
पूजितं तस्य चित्रं, परं शोभनम् ।। 6।।
अक्षया त्वागत्तै तृतीया तिथिः
अक्षयं तस्य शस्त्रं, परं शोभनम् ।। 7।।
सम्भवेत्सार्थकं मे कवित्वं कथम् ?
सूत्रये कीर्ति-पत्रं, परं शोभनम् ।। 8 ।।

महर्षि परशुराम जी

परशुराम का वृत्त, परम शोभन है ।
पुरुषार्थी सन्मित्र, परम शोभन हैं ।।1।।
अति तेजोमय, शम्भु शिष्य हैं परशुराम जी,
जीवन परम पवित्र, परम शोभन है ।।2।।
पितृभक्त हैं यती, तपस्वी, युद्ध विशारद,
सुदृढ़ श्रेष्ठ-चरित्र, परम शोभन है ।।3।।
भगवन् के तप, त्याग, शौर्य द्वारा स्थापित,
शीश सभी के छत्र, परम शोभन है ।।4।।
पिता जन्मदाता सुसेव्य हैं, परम पूज्य हैं,
सदा मान्य यह मन्त्र, परम शोभन है ।।5।।
मन, वाणी और कर्म, हृदय से परशुराम का,
पूजनीय है चित्र, परम शोभन है ।।6।।
आज अक्षया तिथि तृतीया भी आई है,
अक्षय परशु महास्त्र, परम शोभन है ।।7।।
कैसे मेरा भी कवित्व, सार्थक हो जाये,
दिव्य कीर्ति परिपत्र परम शोभन है ।।8।।

गोगङ्गे

पवेते धरणिं गङ्गागावौ।
तयोः पावन्योः पुण्य-स्वभावौ ।। 1।।
त्रिलोकं पावयतः पालयतः ,
पयोभ्यामस्मान्वै स्नापयतः,
भवाब्धिं तरणाय द्वे नावौ ।। 2।।
भारतीयानां ते मातरौ,
तर्पयामस्ताभ्यां पितरौ,
दयां कुर्वाते दीने साधौ ।। 3।।
कृषेः कार्येऽपि तयोर्योगाः ,
विनश्यन्ते, ताभ्यां रोगाः,
ओषधी, जलदुग्धे ते व्याधौ ।। 4।।
किन्तु हा! तेऽस्माभिर्दुःखिते,
मातरौ, सन्तप्ते शङ्किते,
तयोः किं शृण्मो वयं न रावौ ? ।। 5।।
न यूयं, सेवध्वे गं गाम् ,
मार्गयथ, संसारे कं काम् ?
न भक्तिः, 'प्रेम' च नाथे भानौ ।। 6।।

गाय और गंगा

गाय और गंगा पवित्र करती हैं ।
पावन स्वभाव कल्याण करती हैं ।।1।।
पालती पवित्र करती त्रिलोक को,
दूध से जल से भगाती हैं शोक को,
दोनों ये नावें भवसागर तरती हैं ।।2।।
हम भारतीयों की दोनों मातायें,
पितरों को दुग्ध जल से तर्पण करायें,
साधुओं पर दीनों पर दया करती हैं ।।3।।
कृषि कार्यों में भी इनका उपयोग है,
दोनों से नष्टप्राय होते भवरोग हैं,
औषधि हैं जल दुग्ध रोग हरती हैं ।।4।।
किन्तु आज दोनों हम से हैं दुःखिता,
सन्तप्त मातायें, मन में हैं शंकिता
दोनों की पुकार कान घाव करती हैं ।।5।।
गाय और गंगा की हम आज संतानें,
करते उपेक्षा इनके कष्ट नहीं पहचानें,
भक्ति प्रेम हृदय में क्यों न धरती हैं ?।।6।।

मन्दिरम्

हृदयं भवेच्छिवमन्दिरम् ।
पश्यानि तस्मिन् शङ्करम् ।। 1।।
रूपं तदीयं किं मया ?
दृष्टं न तन्मङ्गलकरम् ।। 2 ।।
तत्प्रेम भक्तिं कामये,
धत्ते शिवः सुखसागरम् ।। 3।।
मज्जीवनं हे ! मृड ! भवेत् ,
सत्यं शिवं शुचि सुन्दरम् ।। 4।।
वितनोति यः सर्वं जगत् ,
याचे हि तं योगीश्वरम् ।। 5।।
परिवर्तते, हि प्रकाशते
संहरति पाति चराचरम् ।। 6।।
गङ्गां धरति शीर्षे विधुम् ,
प्रणमाम्यहं विधुशेखरम् ।। 7।।
चित्ते मनसि मे श्रवणयोः
तन्नाम गुञ्जेद्धरहरम् ।। 8 ।।
तप्ताय पयोऽभिलाषिणे,
मह्यं हर ! त्वं निर्झरम् ।। 9 ।।
तव कीर्तने तव वन्दने,
'प्रेमाम्बु झरेन्निरन्तरम् ।। 10।।

हृदय

हृदय बने शिव मंदिर मेरा ।
दिखे वहां पर शंकर मेरा ।।1।।
रूप परम सुंदर आंखों को,
दिखे क्यों न मंलकर तेरा ? ।।2।।
भक्ति प्रेम की करूं कामना,
शिव जीवन सुखसागर मेरा ।।3।।
हे! शिव! यह जीवन बन जाये,
सत्य पूत शुचि सुंदर मेरा ।।4।।
जो धारण करता है जग को,
भला करे योगीश्वर मेरा ।।5।।
पालन रक्षण क्षरण प्रकाशन,
उसने जगत चराचर प्रेरा ।।6।।
गंगा चन्द्र धरे हैं सिर पर,
लें प्रणाम विधुशेखर मेरा ।।7।।
चित्त ध्यान मन उर कानों में,
गूंजे नाम सदा हर तेरा ।।8।।
मैं प्यासा हूँ तथा तप्त भी ,
हर ही केवल निर्झर मेरा ।।9।।
प्रेम करे तव कीर्तन वन्दन,
दृगजल झरे निरन्तर मेरा ।।10।।

श्री गोवर्धनम्

श्री गोवर्धनं नमन्ति, नमन्ति, गिरिराजं, मङ्गलमोदकरम् ।
ते पूजार्थं गच्छन्ति गच्छन्ति धरणीं सुशोभते ते शिखरम् ।। 1 ।।
तव परिक्रमां कुर्वन्ति जनाः
शीर्षे धार्यन्ते रजः कणाः
नरनार्यो मुदा भजन्ति भजन्ति गाथं गायन्तः कीर्तिकरम् ।। 2।।
चतुर्दशक्रोशं भ्राम्यन्ति
दुःखान्येव तेन शाम्यन्ति,
जयघोषं ते कुर्वन्ति कुर्वन्ति प्रणमन्ति, दण्डवद् धरणिधरम् ।। 3।।
दुग्धेन क्रियते ह्यभिषेकः,
श्रद्धा-भावानामतिरेकः
सहपरिवारै र्ध्यायन्ति ध्यायन्ति सर्वत आयान्ति जनाः प्रचुरम् ।। 4।।
दृष्ट्वेन्द्रं तं क्रुद्धं क्षुब्धम्
कृष्णेन पूजनं प्रारब्धम्
गोवर्धनगिरिं श्रयन्ति श्रयन्ति सर्वे रक्षकं गिरीन्द्रवरम् ।। 5।।
गोवर्धनमहिमा श्रुतः सखे !
कृष्णेन धृतो गिरिवरो नखे,
सर्वेऽप्यद्यापि भजन्ति भजन्ति लोकास्तं पुण्यानां निकरम् ।। 6।।
गोवर्धनेन भूरपि धन्या
वन्द्येयं वन्या लावण्या,
रसिकास्तत्रैव वसन्ति वसन्ति यत्प्रेमवर्षणं निरन्तरम् ।। 7।।

गिरि गोवर्धन महाराज

हे! गिरिवर! तुम्हें प्रणाम प्रणाम, गोवर्धन मङ्गल मोद भरें ।
पूजा को पहुंचें धाम, अरे! धाम, शोभित धरती को शिखर करें ।।1।।
सब परिक्रमा जन करते हैं,
सिर पर पावन रज धरते हैं,
भजते नर नारि तमाम, तमाम, गायन सब तेरी कीर्ति करें ।।2।।
चौदह को सीं है परिक्रमण,
करके होता है, दुःख शमन,
जयघोष सुबह अरु शाम, हां शाम, साष्टाङ्ग, दण्डवत नमन करें ।।3।।
अभिषेक दुग्ध से करते हैं,
श्रद्धा से भक्त विचरते हैं,
सब सपरिवार अविराम, अविराम, भारी संख्या में ध्यान करें ।।4।।
हरि ने पूजन प्रारम्भ किया,
इन्द्र के दर्प का दलन किया,
देते हैं शुभ परिणाम, परिणाम गोवर्धन रक्षण तरण करें ।।5।।
नख का गिरि से श्रृंगार हुआ,
दोनों का जय जय कार हुआ,
भजते हैं आठों याम, अरे याम, पुण्यों से जन जीवन सुधरें ।।6।।
ब्रज भूमि धन्य गोवर्धन से,
सौंदर्य बड़ा है गिरि वन से,
प्रेमी पाते विश्राम विश्राम, हृदयों में भक्ति प्रेम भरें ।।7।।

गङ्गा माता

पुण्यानां धारा संसारे, पूरिपूता देवी गङ्गा।
स्वर्गादायाति हरिद्वारे, परिपूता देवी गङ्गा ।।1।।
वहति भारतवर्षे,
नदति गं गं हर्षे
देवी प्रत्यक्षा ह्याकारे ।। 2 ।।
सुरङ्गास्ते तरङ्गे,
दहसि पापं गङ्गे !,
सङ्कोचो नैव स्वीकारे ।। 3।।
पापहरां त्वां मत्वा
तत्र स्नानार्थं गत्वा
ते भक्तास्तिष्ठन्ति द्वारे ।।4।।
स्वर्णदि ! महाभागे !
पुनासि त्वं प्रयागे,
नमामि त्वामहं धारे ! ।। 5।।
अनन्या त्वं महिम्ना,
प्रदूषयन्ति निम्नाः
वयं न ते सुपुत्राः रे ! ।। 6।।
शम्भुशिरसो मातः !
धरायां ते निपातः,
मिलस्यब्धौ किं क्षारे ?।। 7।।
अहं कविर्नगण्यः,
स्नेहात्तवास्मि धन्यः,
वसेत्प्रेम व्यवहारे ।। 8 ।।

गंगा मैया

जग में पुण्यों की धारा है, हमारी गंगा मैया ।
आई भागीरथ द्वारा है, हमारी गंगा मैया ।।1।

भारत में यह बहती है,
खुश हो गं गं कहती है,
ये देवनदी साकारा है, हमारी गंगा मैया ।।2।।

तरंगें इठलातीं,
ये गंगा पाप जलातीं,
संकोच बिना स्वीकारा है, हमारी गंगा मैया ।।3।।

जाकर हैं लोग नहाते,
सब पाप मुक्त हो जाते,
भक्तों का बनी सहारा है, हमारी गंगा मैया ।।4।।

गंगा है महाभागा,
संगम से बना प्रयागा,
कुम्भों का यही किनारा है, हमारी गंगा मैया ।।5।।

महिमागायन करते हैं,
फिर दूषित क्यों करते हैं ?
जीवन धिक्कार हमारा है, हमारी गंगा मैया ।।6।।

शम्भु सिर छोड़ा,
धरा से नाता जोड़ा,
प्रिय क्यों फिर सागर खारा है ? हमारी गंगा मैया ।।7।।

कवि नगण्य मै हूं,
कृपा से धन्य मैं हूँ,
ये प्रेमी पथ प्यारा है, हमारी गंगा मैया ।। 8।।

राधाकृष्णौ

तयोः शरणं गच्छेयं, जपन् राधाकृष्णौ,
वृन्दावनधामनि तिष्ठेयं, भजन् राधाकृष्णौ ।। 1।।
वन्दे भगवन्तम् ,
मुरलिकावन्तम् ,
छविमहं पश्येयं, नमन् राधाकृष्णौ ।। 2।।
राधाकृष्णौ एकः,
अयं तु विवेकः,
युगमहं ध्यायेयं, नमन् राधाकृष्णौ ।। 3।।
न मे परिहासः,
तयोरस्मि दासः,
न तत्किं याचेयं रुदन् राधाकृष्णौ ? ।। 4।।
कारकः कृष्णः,
तारकः कृष्णः,
तर्हि कं पृच्छेयं, त्यजन् राधाकृष्णौ ? ।। 5।।
जगत्तरणीयम् ,
नाम नमनीयम् ,
हृदाऽहं गायेयं, नदन् राधाकृष्णौ ।। 6।।
शिरसि यस्य बर्हः,
भवति स पूजार्हः,
प्रेम ताभ्यां देयं, मनन् राधाकृष्णौ ।। 7।।

राधे ! कृष्णा !

शरण मैं आऊँ रे ! जपूं राधे ! कृष्णा !
वृन्दावन जो पा जाऊँ रे ! भजूं राधे ! कृष्णा! ।। 1।।
सभी से निराला,
मुरलिया वाला,
दरस मैं पाऊं रे ! झुकूं राधे ! कृष्णा ।। 2।।
एक राधे कृष्णा,
मिटाते मृग-तृष्णा,
छवि युगल ध्याऊं रे ! रटूं राधे कृष्णा ! ।। 3।।
न परिहास मानो,
उन्हीं का दास जानो
सभी कुछ पाऊँ रे ! मिलें जों राधे ! कृष्णा ।। 4।।
कृष्ण कर्त्ता हैं,
सभी के भर्त्ता हैं
अलग क्यों जाऊँ रे ! तजूं क्यों राधे कृष्णा ? ।। 5।।
जगत छुटना है,
नाम रटना है,
मगन मन गाऊं रे ! कहूँ राधे ! कृष्णा ! ।। 6।।
मयूर पंख सिर है,
मेरा गिरिधर है,
प्रेम रम पाऊं रे। गहूं राधे ! कृष्णा ।। 7।।

कृष्ण रे

अवतरति धरायां कृष्णो रे !
अतिघोरनिशायां कृष्णो रे ! ।। 1 ।।
अष्टम्यां तिथौ कृष्णपक्षे,
कंसेन कृते काराकक्षे,
प्रकटति मथुरायां कृष्णो रे ।। 2।।
गा अपि चारयति श्रीकृष्णः
मृद्नाति कालियं श्रीकृष्णः
कूर्दति यमुनायां कृष्णो रे ! ।। 3।।
वंशीवादनं परं मधुरम् ,
मोहयति मोहनश्चराचरम् ,
स व्रजवनितानां कृष्णो रे ! ।। 4।।
चन्द्रो वर्धते ह्यवक्रमते,
सरसः स रसो रासे रमते,
पूर्णो हि कलायां कृष्णो रे ! ।। 5।।
दृष्ट्वा पतनं धर्मस्याधः,
कृष्णेन कृतः कंसस्य वधः,
कथ्यते कथायां कृष्णो रे ! ।। 6।।
एको धर्मो भगवद्भजनम्
आत्मा धत्ते वपुषां वस्नम् ,
कथयति गीतायां कृष्णो रे ! ।। 7।।
अद्यापि वर्तते घोरनिशा
विकृताऽद्य कथं किं दशा दिशा ?
प्रथयति न दशायां कृष्णो रे ! ।। 8 ।।
वर्धिताः शठाः भ्रष्टाचाराः
कष्टे गङ्गा-यमुना-धाराः
द्रवति न धारायां कृष्णो रे ! ।।9।।
सम्प्रति खिन्ना राधा धन्या,
व्यथिता भूमिर्वृन्दावन्या,
व्यथते न पृथायां कृष्णो रे ! ।। 10 ।।
द्वापरे त्वया भारतं जितम् ,
पश्यसि न त्वं किं लोकहितम् ?
किमलं गाथायां कृष्णो रे ! ।। 11।।
कीर्तिं गरीयसीं कीर्तयते,
सर्वदा कृपां ते कामयते,
'प्रेम' हि कवितायां कृष्णो रे ! ।। 12।।

कृष्णावतार

अति घोर निशा अंधियारे हैं।
धरती पर कृष्ण पधारे हैं ।। 1।।
है कृष्ण पक्ष की तिथि आठें,
कारा गृह के बंधन काटें
मथुरा में हरि अवतारे हैं ।। 2।।
गोकुल में करते गोचारण,
कन्दुक क्रीड़ा कालियमर्दन,
कूदे यमुना के धारे हैं ।। 3।।
मींठा मींठा वंशीवादन,
मोहते सभी का मन मोहन,
ब्रज वनिताओं के प्यारे हैं। ।।4।।
शशि तो घटते हैं बढ़ते हैं,
हरि सरस रास में रमते हैं,
वह षोडश कलावतारे हैं ।। 5।।
धर्म का देखकर अधः पतन,
कंस का कृष्ण ने किया हनन,
कवि-नायक कृष्ण हमारे हैं ।। 6।।
है धर्म एक भगवान भजन,
आत्मा का है यह देह वसन
गीता में वचन उचारे हैं ।। 7।।
अब भी वैसी ही घोरनिशा,
विकृत मानव की दशा दिशा,
क्यों किन्तु न कृष्ण विचारे हैं ? ।। 8 ।।
शठ बढ़े धूर्त भ्रष्टाचारी,
गंगा यमुना को दुखभारी,
क्यों संकट नहीं निवारे हैं ? ।। 9 ।।
हैं खिन्न बहुत सी राधायें,
वृन्दावन में भी बाधायें
कुन्ती सुत भी दुखियारे हैं।। 10।।
द्वापर में ज्यों भारत जीता,
जन हित में गायी थी गीता,
गाथायें कृष्ण सहारे हैं ।। 11।।
मैं कीर्ति-कीर्तन करता हूँ
हरि-कृपा-याचना करता हूँ
बस कृष्ण प्रेमउजियारे हैं ।। 12।।

राधा-स्तृतिः

त्वां स्मराम्यहं, त्वां नमाम्यहम् ।
देवि! राधिके ! त्वां भजाम्यहम् ।। 1 ।।
रूपगर्वितां, लोललोचनाम्
भक्तिनदीं त्वां, शुक्लभावनाम् ,
हे ! प्रियंवदे ! कीर्तयाम्यहम् ।। 2।।
कृष्णमोहिनीं, कृष्ण विलीनाम् ,
कृष्ण-कोशिनी, कृष्ण प्रवीणाम् ,
कृष्ण-दीपिके ! दर्शयाम्यहम् ।। 3।।
पश्यसीह वै, मुग्धमोहनम् ,
कृष्णनर्तनं, वेणुवादनम् ,
कृष्ा साधिके ! त्वर्चयाम्यहम् ।। 4।।
मोहयसि कथं, कृष्णचन्द्रकम् ?
विस्मरति स तं, मणिं स्यमन्तकम् ,
व्रज विनायिके ! त्वां व्रजाम्यहम् ।। 5।।
त्वं वियोगिनी, भासि मोहनम् ,
मार्मिके स्वरे गीतिगायनम् ,
हे ! सुगायिके ! कर्णयाम्यहम् ।। 6।।
दूरतः स्मृतौ प्रेरयसि कथम् ?
त्वां विना हरिर्न याति, सत्पथम् ,
कृष्ण-प्रेरिके ! चिन्तयाम्यहम् ।। 7।।
सर्वयोषितां, पृथक् प्रकाशसे,
प्रेम वस्तु किं ? त्वं प्रभाषसे,
लोक-प्रेमिके ! लोकयाम्यहम् ।। 8।।

राधा-स्तुति

तव स्मरण करूं, मैं नमन करूं।
देवि ! राधिके ! तव भजन करूं ।। 1।।
रूप-गर्विता, लोल लोचना,
भक्ति नदी सीं, चन्द्र-आनना,
हे ! प्रियंवदे ! सुकीर्तन करूं ।। 2।।
कृष्णमोहिनी कृष्ण-लीन तुम,
कृष्ण-केशिनी हो प्रवीण तुम,
कृष्ण दीपिके ! मैं नयन धरूँ ।। 3।।
मुग्ध कृष्ण को तुम निहारती,
नृत्य-वेणु-रव प्रेम वारती,
कृष्ण-साधिके ! तवार्चन करूं ।। 4।।
कृष्ण-चन्द्र को मोहती तुम्हीं,
महारास में सोहती तुम्हीं,
ब्रज विनायिके ! अनुगमन करूं ।। 5।।
हरि वियोग का, दुख मना रहीं
मर्म भरा सा गीत गा रहीं,
हे सुगायिके ! कर्णध्न करूं ।। 6।।
दूर से बंधे कृष्ण पाश में,
छोड़ द्वारका मग्न रास में,
कृष्ण प्रेमिके ! मैं मनन करूं ।। 7 ।।
सभी से पृथक लुभा रहीं तुम्हीं,
प्रेम वस्तु क्या बता रही तुम्हीं ?
लोक-प्रेमिके ! छवि दृगन भरूं ।। 8 ।।

ओंकारम्

किं त्वं मायां प्रति धावसि रे ?
ओंकारं न शिवं ध्यायसि रे ! ।। 1।।
प्राप्य मनुजदेहं संसारे,
संलग्नो हि जगद्व्यापारे,
हरिकीर्तनं किन्न गायसि रे ?।। 2।।
योगः कर्मस्वेव कौशलम् ,
नियमैः स्यान्मनो निर्मलम् ,
किं व्यर्थ कालं क्षपयसि रे ? ।। 3।।
बन्धमोक्षयोर्मनः कारणम
कुर्वन्तः सज्जना यन्त्रणम्
सन्मार्गे न तु किं गच्छसि रे ? ।। 4।।
देहो मिलति न वारं वारम् ,
किं विस्मरसि जीवानाधारम् ?
चिन्तय पशुवत् किं जीवसि रे ? ।। 5।।
दंशति नित्यं कालव्यालः
बध्नाति त्वां मायाजालः
शिवमन्त्रेण किन्न शाम्यसि रे ? ।। 6।।
गतयौवनो जराग्रस्तस्त्वम् ,
समाप्नोसि किं प्राणस्तित्वम्
धर्मं विना कथं यास्यसि रे। ।।7 ।।
शम्भुरेव मित्रं भक्तानाम् ,
कुरुते क्षयं सर्वपापानाम् ,
प्रभुप्रेम किं त्वं न श्रयसि रे ? ।।8।।

शिव

क्यों, माया की ओर दौड़ता ?
शिव की ओर न ध्यान मोड़ता ।। 1।।
मानव देह भाग्य से पाई,
मायावश क्यों उम्र गंवाई ?
हरि कीर्तन के लाभ छोड़ता ।। 2।।
योग कर्म में यदि कौशल हो,
यमनियमों से मन निर्मल हो,
समय व्यर्थ कर भाल फोड़ता ।। 3।।
बन्धमोक्ष का कारण मन है,
वश में जिसके मन सज्जन है,
क्यों सत्पथ का साथ छोड़ता ।। 4।।
देह मिली मुश्किल से नर की,
भूला शक्ति किन्तु ईश्वर की,
पशुवत् मानव जन्म भोगता ।। 5।।
कालसर्प डसता है पल पल,
बाधे हैं तुझको माया छल,
शिवजप क्यों न सुपुण्य जोड़ता ।। 6।।
जराग्रस्त यौवन बीता है,
देहभाव में ही जीता है,
तुला धर्म की क्यों न तोलता ? ।। 7।।
शम्भु-भक्त जग को तरते हैं,
हर सारे अघ क्षय करते हैं
शम्भु प्रेम क्यों नहीं ओढ़ता ? ।। 8।।

राधा कृष्णः

यथा व्रजसुन्दरी राधा, तथा शिवसुन्दरः कृष्णः।
यदा तरुवल्लरी राधा, तदायं तरुवरः कृष्णः ।। 1।।
सर्वदा तौ तु राजेते, मन्दिरेष्वेव भक्तानाम् ,
यदेषा भक्तिभूराधा, हि तस्याः हलधरः कृष्णः ।। 2।।
कथं कथयानि रूपमहो! ? समर्था नास्ति मे वाणी,
यतो व्रजमाधुरी राधा, ततो व्रतभास्करः, कृष्णः ।।3।।
वर्तते तयोः संसारे ह्यद्भुता प्रेमपरिभाषा,
यदा हरिसहचरी राधा हि तस्या अनुचरः कृष्णः ।। 4।।
अपूर्वा तयोर्भक्तिर्वर्तते मधुरा परा पुण्या,
इयं भक्तीश्वरी राधा, स्वयं योगेश्वरः कृष्णः ।। 5।।
विद्यते नादि नो चान्तो वर्णितुं कश्च शक्तस्तौ,
यतो ह्यन्त्याक्षरी राधा, तथैवाद्यक्षरः कृष्णः ।। 6।।
जगद्वै दुस्तरं मन्ये, तदा मिलतीति जगदीशः,
यतो जगतस्तरी राधा ततो जगदीश्वरः कृष्णः ।। 7।।
उपास्या सर्वथा राधा तया कार्ष्णी कृपा लभ्या,
यथा सा शंबरी राधा तथा वंशीधरः कृष्णः ।। 8 ।।
पृथक साम्राज्यमेकं वर्तते कृष्णस्य राधायाः,
यदे का नागरी राधा तदा नटनागरः कृष्णः ।। 9।।
यतो ह्यवतीर्य मधुपुर्यां 'प्रेम' मधु प्राप्यते हि कथम् ?
यथैषा मधुपुरी राधा तथैको मधुकरः कृष्णः ।। 10।।

राधा व कृष्ण

जहां ब्रजसुन्दरी राधा, वहीं श्री कृष्ण हैं सुन्दर।
अगर तरुवल्लरी राधा, वहीं श्री कृष्ण हैं तरुवर ।। 1।।
सदा दोनो विराजे हैं, हृदयमन्दिर में भक्तों के,
अगर हैं भक्ति भू राधा, वहीं श्रीकृष्ण हैं हलधर ।। 2।।
करुं मैं रूप का वर्णन, नहीं सक्षम मेरी वाणी,
जहाँ ब्रजमाधुरी राधा, वहीं श्रीकृष्ण ब्रज-भास्कर।। 3।।
बड़ी संसार में अद्भुत, उन्हीं की प्रेम-परिभाषा,
अगर हरि सहचरी राधा, वहीं श्रीकृष्ण हैं अनुचर।। 4।।
परम पावन मधुर पुण्या, भक्ति उनकी कही अद्भुत,
जहां भक्तीश्वरी राधा, स्वयं श्रीकृष्ण योगेश्वर ।। 5।।
न उनका आदि है कोई, न उनका अन्त है सम्भव,
अगर अन्त्याक्षरी राधा वहीं श्री कृष्ण आद्यक्षर ।। 6।।
मानता हूँ जगत दुस्तर, तरो श्री कृष्ण मिलते हैं,
जगत की तरी है राधा वहीं श्री कृष्ण जगदीश्वर ।। 7।।
उपास्या हैं श्री राधा भजो पाओ कृपा हरि की,
क्योंकि सर्वेश्वरी राधा, वहीं श्री कृष्ण वंशीधर ।। 8 ।।
अलग साम्राज्य बसता एक ही श्रीकृष्ण राधा का,
वहां की नागरी राधा, वहीं श्रीकृष्ण नटनागर ।। 9 ।।
मधुपुरी अगर जाओगे प्रेम मधु तभी पाओगे,
स्वयं हैं मधुपुरी राधा, वहीं श्री कृष्ण हैं मधुकर ।। 10।।

हे ! रघुकुलभूषणराम !

हे ! रघुकुलभूषण राम, ! कृपां कुरु
हरे ! हरे ! दयां कुरु जगत्पते !
पतितानपि पवते नाम, कृपां कुरु हरे ! ..... (1)
मानवदेहे, दशरथगेहे, लभसे जन्म प्रभो !
मङ्गलकर्त्ताऽसुरसंहर्त्ता,
पुनास्ययोध्या धाम, कृपां कुरु हरे! हरे ! ..... (2)
वृणोति रामो मिथिलापुर्यां सीतां भूमिसुताम्
सर्वरंजनं, धनुर्भञ्जनम्
कर्तुं तत्र जगाम, कृपां कुरु हरे ! हरे ! ..... (3)
द्वापर युगे उलूखलबद्धो दामोदर इत्याख्यः,
नन्द-यशोदा-गृहे, गोकुले,
उदरे विलसति दाम, कृपां कुरु हरे ! हरे ! .....(4)
सीतारामौ राधाकृष्णौ राजेथे भगवन्तौ,
हन्सि राक्षसान् नन्दसि साधून्
पुरूषोत्तमं भजाम, कृपां कुरु हरे ! हरे । ..... (5)
यमुनातीरे, वृन्दारण्ये, गोपीभिः सह रासे,
वंशीधरं प्रकामं त्यक्त्वा,
ब्रूहि कुत्र गच्छाम, कृपां कुरु हरे ! हरे ! ..... (6)
राजसभायां पाञ्चाली त्रस्ता रोदिति ते भक्ता,
रक्षसि लज्जां कुरुषे सज्जाम्
हे ! पटरूपिन् ! श्याम, कृपां कुरु हरे ! हरे ! ..... ।।7।।

हे ! रघुकुलभूषण राम !

हे ! रघुकुल भूषण राम ! कृपा हो, हरे ! हरे ! कृपा हो जगत्पते ।
है पतित पावन नाम कृपा हो हरे ! हरे! दया हो जगत्पते ! ।।1।।
मनुज देह में दशरथ गृह में हरि ने जनम लिया।
असुर संहारे, काज संवारे,
धन्य अयोध्या धाम ! कृपा हो हरे ! हरे ! दया हो जगत्पते ! ।। 2।।
जनकपुरी में वरी राम ने सीता भूमिसुता,
सब का रंजन धनु का भंजन,
मङ्गलमय परिणाम, कृपा हो हरे ! हरे! दया हो जगत्पते ।। 3।।
द्वापर युग में बँधे ओखली दामोदर कहलाये,
नन्द यशोदा घर गोकुल में,
उदर सुशोभित दाम, कृपा हो हरे ! हरे ! दया हो जगत्पते! ।। 4।।
राधा कृष्ण राम सीता की जोड़ी बहुत सुहाती,
राक्षस मारे, साधु सँवारे
पुरुषोत्तमहि प्रणाम, कृपा हो हरे ! हरे! दया हो जगत्पते ।। 5।।
यमुना तट गोपिन के संग वृन्दावन रास रचाते,
सर्वोत्तम वंशीधर को तजि
मिले कहां विश्राम, कृपा हो हरे ! हरे ! दया हो जगत्पते ! ।। 6।।
राजसभा में त्रस्त द्रोपदी रोकर कृष्ण पुकारी,
कृष्ण कन्हाई, लाज बचाई,
हे! पटरूपी श्याम, कृपा हो हरे! हरे! दया हो जगत्पते! ।।7।।

कृष्णनर्तनम्

कालियशीर्षे कृष्णनर्तनम् ।
तेन तस्य मदमानमर्दनम् ।। 1।।
प्रदूषयति यमुनां दुष्टात्मा,
प्रदूषणादुद्धरति महात्मा,
शोधर्यात हि तं कृष्णदर्शनम् ।। 2।।
खलनाशिनी कन्दुकक्रीडा,
तया नश्यते सज्जनपीडा,
जनान् शीकयति यथा चन्दनम् ।। 3।।
दुष्टो गच्छति यमुनां त्यक्त्वा,
भक्तो भूत्वा कृष्णं नत्वा,
भजन् कीर्तयन् विश्वमोहनम् ।। 4।।
प्रभुप्रंपश्यन् परमानन्दे,
लीलाधरं नटवरं वन्दे,
नृत्यन्तं तं नन्दनन्दनम् ।। 5।।
कालियफणं नाथते नाथः,
गुञ्जति गगने जयजयगाथः,
नन्दयशोदा - प्रेम - वर्षणम् ।। 6।।

कालिय-मर्दन

कालिय सिर करते हरिनर्तन।
संग दुष्ट के मद का मर्दन ।। 1।।
यमुना जल कर दिया प्रदूषित,
शुद्ध किया हरि हुए विभूषित,
सुधर गया खल करि हरि-दर्शन।। 2।।
कन्दुक क्रीडा दुष्ट नाशिनी,
साधुजनों को परम ह्लादिनी,
शीतल करती जैसे चन्दन ।। 3।।
यमुना तज कर दुष्ट सिधारा,
कृष्ण नाम का लिया सहारा,
कर मोहन का भजन कीर्तन ।। 4।।
परमानन्द देखि हरि-लीला
लीलाधर नटवर गुणशीला,
नाच रहे वंशीधर मोहन ।। 5।।
कालिय फन नर्तन से नाथा,
गगन गूंजती हरि जय-गाथा,
नन्द यशोदा प्रेम-मुदित-मन ।। 6।।

अम्बिके !

सुतस्ते व्याकुलो जातः ।
कदा भजनं भवेन्मातः ! ।। 1 ।।
मोहयति मां जगन्माया,
कथं प्राप्या कृपाच्छाया,
भवेन्नो यत्तमसि पातः ।। 2।।
जीवनं याति मे त्वरया,
स्वशरणे स्वीकुरु कृपया,
भवेयं सेवको ज्ञातः ।। 3।।
स्वपुत्रान् मोदयति माता,
अहं मातुः स्तुतेर्गाता,
जीवने किञ्च मे प्रातः ? ।। 4।।
प्रसिद्धा दया करुणा ते,
अम्बिके ! जगद्विख्याते !
प्रतिष्ठाप्रश्न आयातः ।। 5।।
त्वया बुद्धिर्मतिर्वाणी,
त्वमम्बे ! सर्व कल्याणी,
'प्रेम्णा त्वयाऽहं स्नातः' ।। 6।।

अम्बे !

मात! मन व्याकुल मेरा।
भजन कब होंगा तेरा ।। 1।।
मोहती जग को माया,
मिले जो तेरी छाया,
रहेगा फिर न अंधेरा ।। 2।।
बीतता जीवन जाता,
शरण में ले ले माता,
बना मैं तेरा चेरा।। 3।।
पुत्र को सुख दे माता,
सदा तेरी स्तुति गाता,
क्यों न मेरा हो सवेरा ?।। 4।।
दया करुणा प्रसिद्ध है,
अम्बिके ! तू समृद्ध है,
उच्च फहरा ध्वज तेरा ।। 5।।
अम्बिके ! तू कल्याणी,
तु ही देती मति वाणी,
प्रेम तेरा है घनेरा ।। 6।।

राधे !

राधे ! त्वं कृष्णप्रिया, मेलय मां श्रीकृष्णम् ।
कार्या सुकृपा सुधिया, प्रेरय तं श्रीकष्णम् ।। 1।।
कुर्यां कीर्तनं प्रभोर्मुखरा स्यान्मे वाणी,
सक्रियास्तु कविक्रिया, सम्मोहय श्रीकृष्णम् ।। 2।।
भक्त्यां भवानि निरतो, कुपथे न ददानि पदम् ,
स्यामभिभूषितं श्रिया, प्रापय मां श्रीकृष्णम् ।। 3।।
तव वशे प्रभुः कृष्णः कुरुते भगवल्लीलाम् ,
युक्तं मां कुरु ह्रिया, ज्ञापय मां श्रीकृष्णम् ।। 4।।
भजनं नमनं यजनं, कीर्तनं हरेर्वै स्याद्,
एका तारणी हि या, मोदय मां श्री कृष्णम् ।। 5।।
देशोऽयं तव व्रजः, गच्छन् सम्प्रति गर्ते,
प्रगतिः स्यात्स्वराष्ट्रिया सूच्चारय श्री कृष्णम् ।। 6।।
तिष्ठन्ति किमासन्द्यां, कारागृहेषु ये स्युः ?
कारां यान्तु त्वरया, सञ्चालय श्री कृष्णम् ।। 7।।
ध्यानं मम कृष्ण-मुखे, प्रेम चरणयोस्ते,
हे परिपूर्णे ! दयया, मापय मां श्रीकृष्णम् ।। 8।।

राधे !

राधे ! तुम कृष्ण प्रिया, मुझे हरि से मिला देना।
वह कृपा करे गिरिधर, प्रेरणा दिला देना ।। 1।।
कीर्तन मैं करता हूं, हो मुखर मेरी वाणी,
मुझें दें कविता का वर, मोहन को सलाह देना ।। 2।।
डूबा भक्ति में रहूं, कभी पाँव कुपथ न धरूँ,
मुझको श्री भूषित कर, रसखीर खिला देना ।। 3।।
लीला करते मोहन तव वशवर्ती हरि हैं
वंशी का मीठा स्वर, कानों को पिला देना।। 4।।
हरि नमन भजन कीर्तन, हो नाम जपन निशिदिन,
मैं सदा रहूं तत्पर, उर पुष्प खिला देना।। 5।।
ब्रज क्षेत्र तुम्हारा क्यों ? अवनत अवसन्न हुआ,
हो राष्ट्र प्रगति पथ पर, औषधि वह दिला देना।। 6।।
सिंहासन बैठे हैं, अधिकारी कारा के,
कारा जायें सत्वर, हरि चक्र हिला देना ।। 7।।
मम ध्यान में कृष्ण रहें तब चरणों प्रेम रहे,
हे ! पूर्ण ! करुणा कर, हरिभक्ति-शिला देना ।। 8 ।।

रङ्गिणी

राधिके ! कुत्र गता?
रङ्गिणी रासरता ।। 1 ।।
भजन्ति परां शक्तिम् ,
लभन्ते हरिभक्तिम्
कवेः सा कल्पलता।। 2।।
यादृशी कृष्णमयी
असि त्वं स्नेहमयी,
तादृशी कोमलता ।। 3।।
चकोरी चन्द्रमुखी,
त्वयाऽहं कृतः सुखी,
प्राप्यते निर्मलता ।। 4।।
सुनूपुरसङ्गीतम् ,
लभेऽहं नवनीतम्
चर्चिता चञ्चलता।। 5।।
वादयति तं वेणुम्,
पुनाति ब्रजरेणुम्
तत्र कार्ष्णी कविता।। 6।।
रङ्ग-रसधारा सा,
प्रेम्ण आधारा सा
प्रणम्या सुन्दरता ।। 7।।
हरेरेका हरिणी
पावनी पुष्करिणी,
प्रभूता पावनता ।। 8।।

रङ्गिणी

राधिका कहां जमी ?
रङ्गिणी रास रमीं ।। 1।।
भजे जो शक्ति परा,
मिले हरिभक्ति वरा,
रहे कवि को न कमी।। 2।।
राधिका कृष्णमयी,
मातृका स्नेहमयी,
पुष्प जैसी नरमी।। 3।।
चकोरी चन्द्रमुखी
कृपा पा हुआ सुखी,
हुआ रचना-धर्मी।। 4।।
चरणसङ्गीत मिला
मुझे नवनीत मिला
समय की सांस थमी।। 5।।
कृष्ण की वेणु बजी,
रास से रेणु सजी,
कृष्ण-कविता जनमी ।। 6।।
रङ्ग रस धारा है,
प्रेम आधारा है,
भगाती दूर तमी ।। 7।।
कृष्ण-मन की हरिणी
सुपावन पुष्करिणी
पूत तरु यथा शमी ।। 8।।

हरे ! मुरारे !

त्वं प्रसीद हे ! हरे ! मुरारे !
कुर्याः कृपां कृष्ण ! कंसारे! ।।1।।
वर्षति मयि वृषभानुनन्दिनी,
राधा नाम्नी तपःस्यन्दिनी,
मयि सा स्निह्यति तव प्रिया रे ।। 2।।
राधानाम रटति मे रसना,
भवति राधया कविता रचना,
गच्छति सा भक्तान् भक्त्या रे !
जानासि त्वं राधां मुग्धाम् ,
चित्त-चकोरीं शुभ्रां शुद्धाम्
चकते चकासिता चन्द्रा रे ! ।। 4।।
राजति राधा तु सुन्दरीणाम् ,
वाणी यथा वादयति वीणाम् ,
तव भक्ताः राधाभक्ताः रे! ।। 5।।
राधा विभाति कृष्णचन्द्रिका,
राधैषा हरिनाममुद्रिका,
उद्यच्छति लोकं राधा रे ! ।। 6।।
भवाम्यहं तव राधादासः,
प्रभुधामैव मदीयो वासः,
तव हस्ते मम 'प्रेम' कथा रे ।। 7।।

हे ! मुरारे ।

हों प्रसन्न श्री हरी मुरारी।
कृष्ण कृपा मिल जाय तुम्हारी ।। 1।।
भक्ति वाहिका राधा रानी,
बरस रही मुझ पर रसधानी,
मुझे स्नेह देती है प्यारी ।। 2।।
रटे नाम राधा मम रसना,
तथा साथ हो कविता रचना,
मुझे मिली है भक्ति सवारी ।। 3।।
शुभ्र सुन्दरी चित्त चकोरी
कृष्ण मोहिनी दिव्य किशोरी
चकित कर रहीं चन्द्रप्रभा री।। 4।।
सुन्दर अनुपम राधा धन हैं,
वीणा स्वर से मधुर वचन हैं,
राधा-भक्त कृष्ण अधिकारी ।। 5।।
राधा कृष्ण-चन्द्रिका जानो,
प्रिय हरिनाम मुद्रिका मानो,
केन्द्र लोक उन्नति का सारी ।। 6।।
जो भी राधा-दास बनेगा,
कृष्ण धाम में वास करेगा,
कृपा-प्रेम की दृष्टि सुखारी ।। 7।।

गौरी

कैलासं गच्छति रे ! गौरी।
नन्दीशं पश्यति रे गौरी ।। 1।।
हिमवत्पुत्री ह्येका दिव्या,
वचने श्रव्या रूपे भव्या,
आकाशं चञ्चति रे ! गौरी ।। 2।।
सा तपस्विनी आद्या शक्तिः,
तस्या रुचिरैषा शिवभक्तिः
उपवासं पुष्यति रे ! गौरी।। 3।।
शिवं विना न कमपि कामयते,
तपति तपो मनसा च प्रयतते,
विश्वासं वाञ्छति रे ! गौरी।। 4।।
"नमः शिवाय" जपति गणमाता,
दृष्ट्वा शिवं प्रसन्ना जाता,
उल्लासं प्रकटति रे ! गौरी ।। 5।।
पश्यत्युमा महेशं मुदितम्
शिवनयने तत्प्रेम प्रकटितम् ,
उच्छ्वासं मुञ्चति रे ! गौरी ।। 6।।
हर आलिङ्गति हृदा पार्वतीम् ,
तपश्चरन्तीमुमां धीमतीम्,
आभासं स्निहयति रे ! गौरी ।। 7।।

उमा

जाती रे ! शिव - कैलास उमा।
जाती रे। शिव के पास उमा ।। 1।।
हिमवत्पुत्री दिव्या है,
मधुवचन दृष्टि भव्या है,
उन्नत रे ! ज्यों आकाश उमा ।। 2।।
तप करती आद्या शक्ति,
उसकी रुचि है शिवभक्ति,
रखती रे ! व्रत उपवास उमा ।। 3।।
कामना है शिव को पाना,
तप करती है विधि नाना,
केवल रे ! शिव विश्वास उमा।। 4।।
नमः शिवाय जप रही निशि दिन,
है प्रसन्न पाकर शिव दर्शन,
भारी रे ! मन उल्लास उमा ।। 5।।
देखा उमा मुदित हैं शंकर,
नयनों झलका प्रेम सरोवर,
लेती रे! सुख-उच्छ्वास उमा।। 6।।
सुन प्रिये ! उमा सम्बोधन,
हर करते हैं हृदयालिङ्गन
देती रे ! प्रिय आभास उमा ।। 7।।

वीणा वाादिनी

वन्देऽहं वीणावादिनीम् ।
कण्ठे सर्वदा निवासिनीम् ।। 1।।
कुर्वेऽहं मातः ! याचनाम् ,
पूरय कृपया कविकामनाम् ,
नौमीशां हंसे गामिनीम् ।। 2।।
साहाय्यं कुरुषे सर्वदा,
वाणी देवि! त्वं सिद्धिदा,
कर्णे मे मधुरिम भाषिणीम् ।। 3।।
ते मातः ! शुभ्रा ज्योत्स्ना,
काव्ये सफला स्याद् योजना,
ध्याये त्वां चिन्त्ताकर्षिणीम् ।।4।।
शून्योऽहं तव सत्वं विना,
मत्कार्यं नो एकाकिना,
जाने गां वीणाधारिणीम् ।। 5।।
गाढोऽयं कवितासागरः,
तुल्योऽहं ते नखशीकरः,
याचे त्वां सागरतारिणीम् ।। 6।।
ध्यानेश्वरी ज्ञानेश्वरी,
प्रेमाहं त्वं वागीश्वरी,
वन्दे कविकाव्यविहारिणीम् ।। 7।।

वीणा वादिनी

तव वन्दन वीणा वादिनी।
मेरे, उर-कण्ठ-निवासिनी ।। 1।।
माता से मेरी याचना,
पूरी हो कवि की कामना,
मानस मरालद्रुतवाहिनी ।।2।।
करती सहायता सर्वदा,
वाणी देवी है सिद्धिदा,
कानों में मधु प्रवर्षिणी ।। 3।।
माता हो तुम शुभ्रानना,
हो सफल काव्य की योजना,
शोभा है, चित्ता कर्षिणी।। 4।।
बिन तेरे सत्व कभी नहीं,
एकाकी कार्य, नहीं नहीं,
माता मम, वीण धारिणी ।। 5।।
कविता सागर गम्भीर है,
तुझसे मन बुद्धि शरीर है,
मां तू ही, सागर तारिणी ।। 6।।
ध्यानेश्वरी ज्ञानेश्वरी,
तू प्रेममयी वागीश्वरी,
कवि-कानन-काव्य-विहारिणी।। 7।।

मुरलिका

प्रणदति यमुनातटे मुरलिका।
केदारे पुष्पिता मधुलिका।। 1।।
गोप्यो वंशी नादं श्रुत्वा,
धावन्त्यस्ताः गेहं त्यक्त्वा
सह गच्छति राधा कोमलिका ।। 2।।
गोपीर्दृष्ट्वा लुप्तः कृष्णः,
कुत्र हरिर्गोपीनां, प्रश्नः ?
सर्वाभिर्ज्ञेया प्रहेलिका ।। 3।।
सर्वाः गोप्यस्तदा व्याकुलाः
प्रथमं प्रकटति हरेर्मेखला,
लोकन्ते चन्द्रं सहेलिकाः ।। 4।।
कृष्णश्चन्द्रो यदा द्योतते,
सर्वासां चित्तं प्रमोदते,
सरोवरे विकसन्ति कमलिकाः ।। 5।।
तदा तटवने रासारम्भः,
श्रयते गोपीः कृष्णस्तम्भः,
प्राणः कृष्णस्ताः पुत्तलिकाः ।। 6।।
प्रकृतिर्नृत्यति नृत्यति राधा,
कृष्णे सति मोक्षे का बाधा ?
वसेदियं मे दृशोर्ज्झल्लिका ।। 7।।
मधुरखं कुर्वन्ति मयूराः,
वृक्षाः खगाः मृगाः हरिपूराः,
पुष्पे विकसति कलिका कलिका ।।8।।
रासे सा सरसा रसवर्षा,
तया हृत्सु जायन्ते हर्षाः
चित्रयन्ति रासं सुतूलिकाः ।। 9।।
रस-वर्षा-स्नानं हि योगिनाम् ,
कृष्ण-प्रेम-धनं गोपीनाम्
चमत्करोति नु रासक्षणिका ।। 10।।

मुरलिका

यमुना तट पर बजे मुरलिका।
खेतों में फूलती मधुलिका ।। 1।।
सभी गोपियां वंशी सुनकर,
दौड़ीं अपने गेह छोड़कर,
संग चली राधा कोमलिका ।। 2।।
देख गोपियां छुपे कृष्ण हैं,
कहां कृष्ण अब यही प्रश्न है ?
कहां कृष्ण शाश्वत प्रहेलिका ? ।। 3।।
व्याकुल हुईं गोपियां सारी,
प्रकटे सह मेखला मुरारी,
कृष्णमुग्धराधा-सहेलिका ।। 4।।
कृष्णचन्द्र चन्द्रमा सोहते,
गोपीजन का चित्त मोहते,
सरोवरों में खिलीं कमलिका ।। 5।।
तटवन पर प्रारम्भ रास का,
गोपी आश्रय कृष्ण-आस का
कृष्ण प्राण हैं वे पुत्तलिका ।। 6।।
नचती प्रकृति नाचती राधा,
कृष्ण साथ फिर क्या है बाधा ?
बसे सदा नयनों में झलिका ।। 7।।
केकारव करते मयूर हैं,
खगमृगतरु हरि भूरिभूरि हैं,
पुष्प बनी है कलिका कलिका ।। 8।।
रस वर्षा है महारास में,
हर्ष भरा है सांस-सांस में
चित्रित करतीं हैं सुतूलिका ।। 9।।
रासस्नान ध्यान योगीजन
कृष्ण प्रेम ही है गोपीधन,
चमत्कार है रासक्षणिका ।। 10 ।।

राधाधारा

पवते राधाधारा !
नश्यन्ते कुविचाराः ।। 1।।
मनसा राधे ! राधे !
राधामहमाराधे,
राधा सर्वाधारा ।। 2।।
त्वं जप राधामन्त्रम् ,
तत्कृन्तति षड्यन्त्रम् ,
नहि तिष्ठन्ति विकाराः ।। 3।।
राधा सदा सनीरा
गाहन्ते तां धीराः
स्निग्धा राधावारा ।। 4।।
भवतारिणी हि राधा,
दूरीक्रियते बाधा,
संसारे सा सारा ।। 5।।
राधाकृष्णौ वन्दे,
अहं सर्वदाऽऽनन्दे,
तस्याः कृपा ह्यपारा ।। 16।।
प्रतिक्षणं भज राधाम् ,
संस्मर दिवसे रात्र्याम्
तस्यै जीवनवाराः ।। 7।।
राधाभक्तिः परमा,
रम्या रामा चरमा
राधा सुनयनतारा ।। 8।।
राधाध्यानं नित्यम् ,
कुरुते मुक्तं सत्यम् ,
लभ्यन्ते संस्काराः ।। 9 ।।
राधा-कृष्णौ एकः,
भक्तैः कृताभिषेकः,
युक्तौ प्रेमद्वारा।। 10।।

राधा भक्ति

राधा भक्ति संवारे।
कुविचारों को मारे ।। 1।।
राधे ! राधे ! भज मन,
कर राधा आराधन,
राधा के सब प्यारे ।। 2।।
राधा मंत्र जपेंगे,
सब षड्यंत्र मिटेंगे,
दूर विकार भगा रे ।। 3।।
राधा स्नेह-प्रदा है,
देती धैर्य सदा है,
राधा-स्नेह नहा रे ।। 4।।
वह भवसिन्धु तराये,
बाधा दूर कराये,
भज तू बिना विचारे ।। 5।।
राधा कृष्ण भजेगा,
सर्वानन्द मिलेगा
छोर न कूल किनारे ।। 6।।
भज राधा को पल छिन,
जीवन भर का सुमिरन,
अर्पण निशिदिन सारे ।। 7।।
राधा भक्ति परम है,
सुखदा यही चरम है,
राधा ही दृगतारे ।। 8।।
राधा ध्यान नित्य हो,
जीवन्मुक्त सत्य हो,
पायेगा शुभता रे ।। 9।।
राधा कृष्ण युगल ये,
सचमुच भक्त-कुशल ये,
यही प्रेम के द्वारे ।। 10।।

हे ! गौरीपुत्र !

हे ! गौरीपुत्र ! नमस्ते।
ऊर्जयते मामोजस्ते ।। 1।।
शङ्करपार्वतीसुतस्त्वम् ,
दद्याः गणनाथ! कवित्वम् ,
ऋद्धिः सिद्धिस्तव हस्ते ।। 2।।
विघ्नैर्मे मतिरुद्विग्ना,
नश्यन्ते त्वयैव विघ्नाः,
विघ्नोपरि सदा जयस्ते ।। 3।।
त्वं प्रथमो गुरुर्गरीयान्
पूज्यो देवेषु वरीयान्
करुणा ते ह्यापद्ग्रस्ते ।। 4।।
सत्पुत्रस्त्वं संसारे,
तव पुत्रोऽहं व्यापारे
किं नास्ति सुताय मनस्ते ? ।। 5।।
गणपतिं विना नो कार्यम् ,
विदितं ते परमौदार्यम् ,
मङ्गलकारी प्रभवस्ते ।। 6।।
अर्चां किं ते न करिष्ये ?
पश्यसि मे प्रभो ! भविष्ये,
योजय मां पथि प्रशस्ते ।। 7।।
भ्रामयसि जगत्त्वं जाने,
किं मच्चिन्ता नो ध्याने,
प्रेमोपरि किञ्च करस्ते ।। 8 ।।

हे ! गणपति

हे ! गणपति तुम्हें पुकारा।
तुम हो ऊर्जा की धारा ।। 1।।
तुम सुत शङ्कर गौरी के,
दे दो कवित्व - गुण नीके,
सब ऋषि सिद्धि प्रभु द्वारा ।। 2।।
मति विघ्न ग्रस्त है मेरी,
छवि विघ्न नाशिनी तेरी,
विघ्न क्षय गणपति द्वारा ।। 3।।
गुरुओं में श्रेष्ठ गणेश्वर,
हैं प्रथम पूज्य विघ्नेश्वर,
दुखियों का संकट टारा ।। 4।।
तुम श्रेष्ठ पुत्र हो जग में,
तव सुत हूं क्यों डगमग मैं ?
क्यों मुझको नहीं संवारा ?।। 5।।
तुम परम उदार विदित हो,
क्यों मेरा कार्य न हित हो ?
मङ्गल-हित प्रभव तुम्हारा।। 6।।
मैं करूं आपका अर्चन,
प्रभु पर निर्भर है जीवन,
पथ करो प्रशस्त हमारा ।। 7।।
गणनायक ! जग नायक हो,
शुचि मति शुभफल दायक हो,
कस पाये प्रेम किनारा ?

परमपिता

यत्र पिता परमात्मा।
रमते तत्र महात्मा ।। 1।।
तस्य कृपां विना न हि सिद्धिः,
कृपयार्द्धिः सुखमेव समृद्धिः
कृपाश्रितो जीवात्मा ।। 2।।
कृपया तस्य फलन्ति हि वृक्षाः,
तद्द्दष्ट्या जीवानां रक्षा,
सत्यञ्चैव चिदात्मा ।। 3।।
लोके प्रभुर्विभुः स्वानन्दः।।
सर्वान् नन्दति लोकान् नन्दः,
रमते रसो रसात्मा ।। 4।।
भजति केवलं यो भगवन्तम्,
स्निहयति सदा प्रभुस्तं सन्तम् ,
मन्यते हि पुण्यात्मा ।। 5।।
राधा-प्रेम-शीकरः कृष्णः,
भक्ति-प्रेम-निर्झरः कृष्णः
राधैषा कृष्णात्मा ।। 6।।

परमात्मा

सबके परम पिता परमात्मा।
प्रभु में रमता वही महात्मा ।। 1।।
ईश कृपा से सिद्धि मिलेगी,
उर-उपवन सुख कली खिलेगी,
ईश्वर पर निर्भर जीवात्मा ।। 2।।
सब जीवों का रक्षण पोषण,
वृक्षों पर फलपुष्पारोपण,
ईश्वर सत्य सदैव चिदात्मा ।। 3।।
वह स्वानन्द लोक व्यापक है,
मोहक सबका मनमोदक है,
रमा वही सर्वत्र रसात्मा ।। 4।।
जो भजता है हरि अनन्त को,
मिलता हरि का स्नेह संत को,
वह हरि भक्त संत पुण्यात्मा ।। 5।।
राधा-प्रेम-सलिल गिरिधर हैं,
भक्ति प्रेम के हरि निर्झर हैं,
राधा रानी हैं कृष्णात्मा ।। 6।।

गणेशम्

विघ्नेश्वरं गणेशं गौरीसुतं नमामि।
लम्बोदरं सदा त्वां कल्याणकं भजामि।। 1।।
कुर्मो वयं न पूजां जानीमहे न भक्तिम्
याचेकृपांत्वदीयां ते मन्दिरे न यामि ।। 2।।
हे ! देव ! बुद्धिदाता स्वामी ददासि सिद्धीः,
किं मे न मङ्गलं ते छायातले वसामि ।। 3।।
नो त्वत्समो जगत्यां सर्वाधिपो गणानाम् ,
देवाधिदेवपुत्रं विद्याधरं व्रजामि।। 4।।
चिन्ता न मे यदाऽयं नौवाहको गणेशः,
संसारसागरं तं जाने ध्रुवं तरामि ।।5।।
कार्येषु मे सहायः स्यान्मोदकप्रियो वै,
दाता विराजते सोऽहं केवलं कृषामि।। 6।।
गौरी-महेश-गेहे मज्जन्मजात-निष्ठा ,
गोपी गणेशमाता तच्छावको भवामि।। 7।।
गौरीज ! प्रार्थनेयं श्रव्या त्वया मदीया,
मन्त्रं विशालकाये कर्णे हृदोच्चरामि ।। 8।।
पश्यामि नैव तोयं ह्यर्घ्यं ददानि तुभ्यम् ,
नाथ ! प्रसीद तस्मादश्रूणि वाहयामि ।। 9 ।।
प्रेम-प्रसूनयुक्तां त्वामर्पयामि मालाम् ,
त्वत्पादयोर्रजतच्छीर्षे मुदा धरामि।। 10।।

गणेश

गौरीज उमासुत को, कर जोड़कर नमन है।
कल्याण सदा करता गणनाथ का भजन है ।। 1 ।।
मन्दिर न मैं गया हूं पूजा न भक्ति की है।
फिर भी कृपाभिलाषी, भगवन् ! त्वदीय जन है।। 2।।
स्वामी हैं आप मुझको दें ऋद्धि सिद्धि दाता।
मैं आपके सहारे, प्रभु मङ्गलायतन है ।। 3।।
कोई समान प्रभु के संसार में नहीं है,
विद्या निधान शिवसुत, जन आपकी शरण है ।।4।।
चिन्ता मुझे नहीं है, नैया गणेशकर में,
होगा अवश्य मेरा, संसार से तरण है।। 5।।
मोदकप्रिय सदा ही हैं सहायक हमारे,
दाता मदद करेंगे, मम कर्म तो वपन है ।। 6।।
गौरी महेश में है, मम जन्मजात निष्ठा,
रक्षा उमा करेंगी, यदि कष्ट में सुवन है ।। 7।।
हे ! वृकोदर ! सुनोगे क्यों प्रार्थना न मेरी ?
हार्दिक पुकार मेरी अति दीर्घ तव श्रवण है ।। 8।।
मैं अर्घ्य कहां से दूं ? गङ्गाम्बु भी नहीं है,
होवें प्रसन्न भगवन् ! अर्पित ममाश्रु कण हैं ।। 9 ।।

मित्रतायै

बन्धुतायै न दंशनं त्यक्तम् ।
मित्रतायै समर्पितो न त्वम् ।। 1।।
भोजनं शयनं प्रजननं कृत्वा
सर्वजीवाः न यान्ति देवत्वम् ।। 2।।
मित्रवत्पश्य यदा कोऽपि मिलेत्
ब्रूहि मधुरं तदेव वक्तृत्वम् ।। 3।।
दीयते किञ्चिदपि न दीनेभ्यः ,
हन्त ! तेषां वृथैव धनिकत्वम् ।। 4।।
त्यागरूपं हि तत्र नारीत्वम् ।। 5।।
न स्पृशस्यपि तं मनुष्यं दुःखे,
किं वृथा भाषसे मनुष्यत्वम् ।। 6।।
भक्तिरेका सदा हि संसारे,
प्राप्यते भक्तैर्यया महत्तत्वम् ।। 7।।
लाभहानी न मित्रता पश्यति,
'प्रेम' निस्वार्थमेव मित्रत्वम् ।। 8।।

मित्रता दिवस पर

छोड़ डसना तू, बन्धुता के लिए।
चाहिये होम, मित्रता के लिए ।। 1।।
जिन्दगी मत गुजार खा पीकर,
कर्म हों दिव्य, देवता के लिए ।। 2।।
मित्र मानो हरेक प्राणी को,
मधुर वाणी हो वक्तृता के लिए ।। 3।।
दीन को दीजिए यथा सम्भव
जरूरी दान, धन्यता के लिए ।। 4।।
लब्धियों का, महत्व है लेकिन,
त्याग-गुण, नारी महत्ता के लिए।। 5।।
दुख में स्पर्श, सान्त्वना भी नहीं,
व्यर्थ भाषण, मनुष्यता के लिए ।। 6।।
भक्ति नौका है, जगत सागर में
भक्ति सोपान, दिव्यता के लिए ।। 7।।
मित्रता गिनती, लाभ हानि नहीं,
प्रेम निस्वार्थ, कर खुदा के लिए ।। 8 ।।

श्रावणी

वसुधया प्राप्यते भव्यता।
कुत इयं श्रावणी ह्यागता ।। 1।।
जलधरैर्मेदिनी-स्नापनम् ,
तृणतृणे दृश्यते शुभ्रता।। 2।।
गर्जितैर्जलधरैर्वर्षकै,
र्नवनवाऽऽचर्यते धृष्टता ।। 3।।
नवयुवत्यास्तनुक्लेदनात् ,
मानसे वर्धते दग्धता ।। 4।।
इह कथं यापनं सम्भवेद् ,
ऋतुमती लोकते दुःखिता ।। 5।।
जनकसदने नवोढा सुता,
प्रियतमं प्रेक्षते प्रोन्नता ।। 6।।
श्वशुरगेहं प्रयाणाय ते,
पतय इच्छन्ति पत्नीव्रताः ।। 7।।
उपरि यूनामहो ! कूर्दनात् ,
मनसि सञ्जायते तीक्ष्णता ।। 8।।
स्फुटति प्रेमाङ्.कुरः श्रावणे,
भवति मन्थरा प्रेमता ।। 9 ।।

श्रावणी

धरणि पा गई मिली भव्यता
मन छुए श्रावणी श्रेष्ठता ।। 1।।
जलद द्वारा धरा-स्नान भी,
सर्वथा दे गया शुभ्रता ।। 2।।
बरसना गरजना जल्द का,
नित नई हो रही धृष्टता ।। 3।।
नव युवतियों का भीगा वदन,
बढ़ गई मानसिक दग्धता ।। 4।।
अब कटे किस तरह जिन्दगी,
देखती ऋतुमती दुःखिता।। 5।।
जनक गृह नवोढ़ा सुता,
है स्वपति के लिए उद्यता ।। 6।।
श्वशुर घर चले जा रहे,
पति वियोगी हुए लापता ।। 7।।
युवतियां उछल कूदतीं,
मन-सदन में बढ़ी तीव्रता ।। 8 ।।
उग रहा प्रेम सावन लगा,
बढ़ गई प्रेम-परिपक्वता ।। 9।।

किं जीवनम्

भोः ! प्रयागाद् विमुक्तस्य, किं जीवनम् ?
हन्त ! सेवा-निवृत्तस्य, किं जीवनम् ? ।। 1।।
साम्प्रतं प्राकस्मतिर्द्योतते सात्विकी,
तन्निराशा-निशान्धस्य, किं जीवनम् ? ।। 2।।
कीलितं हि क्षणं क्रूर कालेन वा,
चाय-पान-प्रवृत्तस्य, किं जीवनम् ? ।। 3।।
की दृशं कालचक्रं परावर्तते ?
स्वेगृहे मित्रहीनस्य, किं जीवनम् ? ।। 4।।
अस्मि वाचा हृदाऽहं कविः कर्मणा,
पण्यवीथ्यां नु गीतस्य, किं जीवनम् ? ।। 5।।
कार्यक्षेत्रे रतोऽयं जनः सर्वदा,
निष्क्रियस्यास्य शान्तस्य, किं जीवनम् ? ।। 6।।
न प्रसन्नो न तुष्टो वने निर्जने,
मूलहीनस्य वृक्षस्य, किं जीवनम् ? ।। 7।।
वर्तते वेदहो ! 'प्रेम' नो जीवने
तच्छरीराख्ययानस्य किं जीवनम् ।। 8।।

प्रयाग से हटकर

दूर संगम से हटकर के, क्या जिन्दगी ?
हाय! सेवा से कट करके, क्या जिन्दगी ? ।। 1।।
पुरानी सात्विकी सी हैं, यादें बहुत
अब अंधेरे में मिटकर के, क्या जिन्दगी ।। 2।।
आज प्रत्येक पल काल कीलित हुआ ?
बस पियो चाय डटकर के, क्या जिन्दगी ? ।। 3।।
काल का चक्र पलटा हुआ है अरे !
छुट गये मित्र फुटकर के, क्या जिन्दगी ? ।। 4।।
जो हृदय कर्म से कवि रहा सर्वदा
विपणि में यूं खटकर के, क्या जिन्दगी ? ।। 5।।
क्रियाशील जन जो रहा क्षेत्र में
जियें अब उलट करके, क्या जिन्दगी ? ।। 6।।
न सन्तुष्ट निर्जन विजन में सुखी,
विटप-मूल कट करके, क्या जिंदगी ? ।। 7।।
अगर जिन्दगी हो बिना प्रेम के,
मात्र तन में सिमट करके, क्या जिन्दगी ? ।। 8।।

अद्य का प्रस्थितिः

अद्य का प्रस्थितिर्दृश्यते दुर्गतिः।
नैव जाने गता कुत्र तेषां मतिः ।। 1।।
यत्त्वकार्यं कृतं, निन्दनीयं महत्
विद्यते राष्ट्रव्याप्ता हि चिन्ता विपत् ,
बाधितव्याऽस्मदीया न राष्ट्रोन्नतिः ।। 2।।
नानुशोचन्ति ते चिन्तनीयं परम् ,
शिक्षयेद्यन्त्रयेत्कश्च सत्ताधरम् ?
मूक आस्तेऽद्य किं लोकप्रश्ने पतिः ? ।। 3।।
ते तुदन्ते जनान् चैव कटुभाषया,
घोषमाणाः न तिष्ठन्ति दुष्टाशयाः,
वर्तते केवलं स्वार्थवृत्तौ रतिः ।। 4।।
सर्वविदिताऽद्य वै राष्ट्रिया दुर्दशा,
धारणीया जनैरद्य तीक्ष्णा कशा,
किन्न रुद्धा भवेल्लोक-राष्ट्र-क्षतिः ? ।। 5।।
युध्यते भारते भ्रष्टता-दानवः,
क्लेदयत्यद्य सर्वान् कदर्थार्णवः,
लोकनीया भवेन्मङ्गला परिणतिः ।। 6।।
जाग्रताः सक्रियाः सज्जनाः भारते,
स्वर्णिमं राष्ट्रचित्रं तदा द्योतते
पश्यतीयं भविष्यं नवा सन्ततिः ।। 7।।

दुर्दशा

दीखती आज क्यों दुर्दशा भूख है ?
बुद्धिमानो ! सुनो हो रही चूक है। ।।1 ।।
आज चिन्ता विपत राष्ट्र-व्यापी हुई,
ठीक बिलकुल न जो आपाधापी हुई,
सोचते क्यों नहीं ? दुख की बात है,
शासकों की है शह कौम की मात है,
क्यों सवालों में मुखिया खड़ा मूक है।। 3।।
दुःख देते हैं उनकी है कड़वी जुवाँ,
फिर मुकरते जुबाँ पर ठहरते कहाँ ?
क्यों न भरता कभी स्वार्थ-सन्दूक है? ।। 4।।
दुख होता दशा देखकर देश की,
है जरूरत इन्हे लोक-संदेश की,
बात करनी पड़ेगी ही दो टूक है ।। 5।।
भ्रष्टता दैत्य से हो रहा युद्ध है,
कृष्ण-धन कर रहा आज विक्षुब्ध है,
बन षडानन तुम्हें मारनी फूंक है। ।। 6।।
भारती अब जगी लोक जाग्रत हुआ,
आज मजबूत गणतन्त्र भारत हुआ,
अब न सन्तति नई कूप मण्डूक है।। 7।।

उपचारः किम्

अस्ति मनस उपचारः किम् ?
अस्मिन् वसति विकारः किम् ? ।। 1।।
अस्य तु विपरीतश्चालः,
चलति यथा चलति व्यालः,
चलने वक्राकारः किम् ? ।। 2।।
आचरतीह सदा चौर्यम् ,
नास्ति यन्त्रणे सौकर्यम् ,
सम्भवो न संस्कारः किम् ? ।। 3।।
नैव कदापीदं दयते,
सदा स्वेच्छया योजयते,
मयि खल्वत्याचारः किम् ? ।। 4।।
नित्यं कुत्र कुत्र रमते ?
क्लिश्यते हि न यदा लभते,
अस्ति न सुष्ठु विचारः किम् ?।। 5।।
इच्छति नवं नवं रूपम् ,
गच्छति किं कूपं कूपम् ?
भवेदस्य तूद्धारः किम् ? ।। 6।।
त्यजति न निन्द्यं व्यापारम् ,
भजति न किं सर्वाधारम् ?
नायं प्रेमाधारः किम् ? ।। 7।।

उपचार

क्या मन का उपचार नही ?
मन से गये विकार नहीं ? ।। 1।।
उलटी इसकी चाल सदा,
चलता जैसे व्याल सदा,
सचमुच सरलाकार नहीं ।। 2।।
चोरों सा आंचरण करे,
बरजो फिर भी वरण करे,
होता दिशा-सुधार नहीं ।। 3।।
क्यों यह निर्दय भारी है ?
बिलकुल स्वेच्छाचारी है
रुकते अत्याचार नहीं ।। 4।।
दौड़ लगाता इधर उधर,
रोता पाये नहीं अगर
इसके श्रेष्ठ विचार नहीं ।। 5।।
नई नई नित ख्वाहिश है,
रोज नई फरमाइश है,
हो सकता उद्धधार नहीं ? ।। 6।।
नहीं निन्द्य यह काम तजे,
परमेश्वर को नहीं भजे,
ईश प्रेम स्वीकार नहीं ? ।। 7।।

राघवी

शैशवे प्राशने राजते राघवी।
सर्वदा जीवने काशते शाम्भवी।। 1।।
कर्मभिर्मेधया प्राप्यते श्रेष्ठता,
कामये सा भवेद्दुर्लभा मानवी।। 2।।
तारयेत्सर्वदा ह्लादिनी द्वे कुले
सर्वलोकान् यथा कल्पते जाह्नवी।। 3।।
यत्र गच्छेत्सदा साऽन्नपूर्णा भवेद्
सर्वतो द्योतते वै यथा भार्गवी ।। 4।।
आशिषस्त्वद्य वर्न्तन्त एकैकशः ,
प्रेमयुक्ता भवेत्सा लतामाधवी ।। 5।।

टिप्पणी - (डा0 आद्या प्रसा मिश्रस्य प्रपौत्र्या राघव्या अन्न प्राशनावसरे रचिता)

राघवी

राघवी के लिए अन्न प्राशन घड़ी।
हो रही है खुशी जिन्दगी में बड़ी ।।1।।
कर्म-मेधा सदा श्रेष्ठता सूत्र हैं,
मानवी सिद्ध हो सद्‌गुणों से जड़ी ।। 2।।
तार दे दो कुलो को गुणाह्लाद से,
स्वर्ग गंगा धरा के लिए ज्यों कढ़ी ।। 3।।
हो जहां भी बनी अन्नपूर्णा रहे
दे खुशी गन्ध दे ज्योति दे फुलझड़ी ।।4।।
दे रहा ढेर सारी शुभाशीष मैं,
जिन्दगी प्रोत हो प्रेममुक्ता लड़ी ।। 5।।

आतपशाला

आतपशाला विकराला रे ! ।
हा! कुत्र गता घनमाला रे ।। 1।।
ते तीक्ष्ण-शरा इव सूर्यकराः ,
तप्तीभूता घर्मेण धरा,
प्रज्जवलितेयं किं ज्वाला रे ? ।। 2।।
वाष्पं वाष्पं, पूर्णं गात्रम् ,
प्रतिभाति यथोष्णं जलपात्रम्
लवणक्लिन्ना मधुबाला रे ।। 3।।
सर्वे गच्छन्ति व्याकुलताम्
छायामिच्छन्ति च शीतलताम्
किं दीनाः, किं भूपालाः रे ? ।। 4।।
तृषितां धरणीं दयते क्षुब्धाम् ,
मत्तो जलदो ज्ञात्वा मुग्धाम् ,
वर्षति विपुला जलहाला रे ।। 5।।

आतपशाला

भीषण अति आतपशाला है।
जाने न कहां घनमाला है ? ।। 1।।
शर जैसी किरणें लगती हैं,
धूपाक्त धरित्री तपती है,
क्यों जलती सी जग ज्वाला है ? ।। 2।
पूरा शरीर है भाप, भाप,
छोड़ती कढ़ाही यथा ताप,
नमकीन हुई मधुबाला है।। 3।।
बढ़ गई सभी की व्याकुलता
छाया चाहते व शीतलता,
हर शख्स आम या आला है।। 4।।
धरणी है क्षुब्ध बड़ी प्यासी,
वारिद देखी मुग्धा दासी,
बरसादी तब जलहाला है।। 5।।

भारतराष्ट्रम्

भारतराष्ट्रं लोकतान्त्रिकम् ।
अत्र स्वातन्त्र्यं स्वधार्मिकम् ।। 1।।
देशोऽयं वर्तते पुराणः,
विश्वात्मा मानवता-प्राणः,
लोकजीवनं पारमार्थिकम् ।। 3।।
प्राचीना संस्कृतिः सभ्यता,
कणे कणे भगवद् व्यापकता,
भगवत्त्वं तत्पराभौतिकम् ।। 4।।
अधुनातनमपि शिक्षातन्त्रम्
नवमन्त्रो प्रचलति नव-यन्त्रम्
यतो वर्तते युगं यान्त्रिकम् ।। 5।।
पुत्राः पित्रा सह निवसन्ति,
पाठमेकतायाश्च पठन्ति,
भवति जीवनं पारंपरिकम् ।। 6।।
चितो जनमतेन नु विधायकः,
तेषामेको राष्ट्रनायकः,
चिन्मः सत्यं शिवं शान्तिकम् ।। 7।।

भारत राष्ट्र

भारत राष्ट्र लोकतान्त्रिक है।
जनस्वातन्त्र्य यहां धार्मिक है। ।।1।।
देश हमारा बहुत पुराना,
मानव प्राण, विश्व ने माना,
जीवन यहां पारमार्थिक है ।। 2।।
इसकी अति प्राचीन सभ्यता,
कण कण में ईश्वर व्यापकता,
ईश्वर तत्व परा भौतिक है।। 3।।
शिक्षा तन्त्र हुआ प्रवीण है,
मंत्र यंत्र भी अब नवीन है,
क्योंकि आज का युग यांत्रिक है।। 4।।
पिता पुत्र मिलकर रहते हैं,
बात एकता की कहते हैं,
जीवन मधुर पारिवारिक है ।। 5।।
विधायकों को चुनते मत से,
देश चलाते मिल बहुमत से,
यही सत्य शिव है शान्तिक है।। 6।।

भारत देशः

दिव्यात्मा विश्वं प्रकाशते भास्कर-भारत-देशः।
गुञ्जति गीता-संदेशः ।।1।।
ऋषिभिर्मुनिभिर्यतीयोगिभिर्ज्ञानं पूर्वं दत्तम् ,
भारत-भूमिः सदा शिक्षते रामकृष्णयोर्वृत्तम् ,
ईश्वर-शरणं गन्तव्यं सर्वोपरि कृष्णादेशः ।।2।।
शोभन्ते निष्क्रियाः न तस्मात्कर्म सदा वरणीयम् ,
मोक्षार्थिने फलेच्छारहितं कर्म किन्तु करणीयम् ,
कर्मसु कौशलमेव तु योगः कथयतीति योगेशः ।। 3।।
कर्त्ताभावो यदा विद्यते कर्मफलं भोक्तव्यम्,
सर्वस्वं भगवन्तं मत्वा तस्मै समर्पितव्यम्,
क्षयति कल्मषान् क्लेशान् कष्ट कृष्ण एव करुणेशः ।। 4।।
भारतदेशे विद्यन्ते गौरिव गुरुगीतागङ्गाः,
जले स्थले आकाशे राजति राष्ट्र-ध्वजा-त्रिरङ्गा,
सफलाः कथं शत्रवो रक्षति हिमालयो गोपेशः ? ।। 5।।
विश्वस्मिन् विदुषां वीराणां भूमिरियं विख्याता,
प्राणेभ्योऽपि प्रिया समेषां वन्द्या भारतमाता,
पुनः भविष्यति भारतस्य गौरवपूर्णः प्रभुवेशः ।। 6।।
भगत-सुभाष-गान्धि-तिलकाः भारतमातुः सुकुमाराः,
'प्रेम'-शान्ति-करुणा-सेवा-प्रसारणी-भारतधारा,
हिंसावैरघृणा-भावानामिह वर्जितः प्रवेशः ।। 7।।

भारत देश

भास्कर भारत देश हमारा इसको विश्व पूजता।
गीता-संदेश गूंजता ।। 1।।
ऋषि मुनि ज्ञानी यती योगियों का विज्ञान यहीं है,
राम कृष्ण की शिक्षा वाला देश महान यही है,
ईश शरण गन्तव्य सभी का गीता सार सूझता ।। 2।।
करना होगा कर्म कभी निष्क्रियता नहीं उचित है।
मोक्ष हेतु निष्काम कर्म करना सदैव वांछित है,
धुरी कर्म कौशल है जिस पर पूरा योग घूमता ।। 3।।
मन में कर्त्ताभाव, कर्मफल फिर भोगना पड़ेगा,
अतः कर्म को ईश्वरार्पण से जोड़ना पड़ेगा,
पाप कष्ट हरता दुःखों में मस्तक कृष्ण चूमता ।। 4।।
भारत में है वन्दनीय गुरु गीता गाय व गंगा,
जल थल नभ में लहराता है अपना सदा तिरंगा,
रक्षा हेतु हिमाद्रि खड़ा है अरि की ओर घूरता ।। 5।।
वीरों विद्वानों की जननी भूमि रही है प्यारी,
भारत माता प्राणों से भी प्रिय है हमें हमारी,
गौरवपूर्ण दिखेगा फिर से भारत वर्ष झूमता।। 6।।
तिलक-सुभाष-भगत-गान्धी भारत-सुकुमार रहे हैं,
प्रेम-शान्ति-करुणा-सेवा भारत-संस्कार रहे हैं,
हिंसा-वैर-घृणा-गन्धों को भारत नहीं सूँघता ।। 7।।

अधुना

सा राजनीतिः काऽधुना? पदलोलुपानां खेलनम् !
स्वार्थस्य तेषां साधनं, जानामि लोकोत्पीडनम् ।।1।।
निजपोषणाय हि राष्ट्रियां, मूषन्ति ये ये सम्पदम्,
कथयन्ति ते हितकारिणो, राष्ट्राय तेषां जीवनम् ।।2।।
स्वार्थं जनाः पश्यन्ति नो राष्ट्रक्षतिं पशुवृत्तयः,
तेषां प्रियान्धसमर्थकाः कुर्वन्ति मिथ्या कीर्तनम् ।।3।।
चित्तेषु तेषां विद्यते न तु राष्ट्रभक्तेर्भावना,
सत्ताधराणां दुष्कृतां तत्किं भवेत्संकीलनम् ?।।4।।
खिन्ना हि नागरिकाः बुधाः मर्माहताः खलगाथया,
किन्चिन्न किं भवतीह तेषां चक्षुषोरुन्मीलनम् ? ।।5।।
भास्कर उदेतु विनाशयेद् भ्रष्टान् भ्रमान् भ्रान्ताँस्तथा
प्रेमाम्बुपूरितभारते, राजिष्यते नलिनीवनम् ।।6।।

राजनीति

ये राजनीति समाज में, लोलुप मनोरंजन बनी।
साधन हुई है स्वार्थ का, जनता का उत्पीड़न बनी ।।1।।
चोरी यहां होती बहुत सम्पत्ति अपने राष्ट्र की,
बनते हितैषी चोर हैं, निज पूर्ति ही कारण बनी ।।2।।
स्वार्थी बने पशु वे सभी, क्षति देश की देखें नहीं,
अंधी समर्थक मण्डली बस झूठ-सकीर्तन बनी ।।3।।
क्यों चित्त में उनके नहीं, है राष्ट्रहित की भावना ?
इन निम्न सत्ताधरों की प्रिय नीति काला धन बनी ?।।4।।
अति खिन्न अच्छे नागरिक सुनकर खुलासे खलों के,
कैसी है माया मोहनी जो चक्षु-सम्मोहन बनी ।।5।।
भास्कर उगेगा एक दिन भ्रम-भ्रष्ट होंगे नष्ट ही,
प्रेमाम्बु पूरित देश की शोभ बढ़ेगी अति घनी

राष्ट्रे

संविधिः स्थापितः पुरा मनुना।
मन्यते नैव सांसदैरधुना ।।1।।
राष्ट्रभावो मनःसु नो तेषाम् ।
नीतयो विस्मृताश्चिताः गुरुणा ।।2।।
मानयन्ते न राममादर्शम्,
यस्य मार्गः प्रदर्शितो रघुणा ।।3।।
संस्कृतिर्भारतस्य सम्पूर्णा,
सङ्कटे नद्योऽपि गंगा-यमुनाः ।।4।।
काशयति चित्तं न तेषामर्कः,
किन्न कुर्वन्ति यत्कृतं पृथुना ?।।5।।
लोककल्याणमेव भोः! लक्ष्यम्,
सन्मतिः किन्न हि दत्ता प्रभुना ।।6।।
स्वार्थभावे सदैव तिष्ठन्तः,
संहृतं चित्तं तु तेषां विधुना ।।7।।
वाक्प्रहारैर्जनाः प्रदूयन्ते,
सिञ्चिता वाणी न तेषां मधुना ।।8।।
श्रूयते कृष्णधनस्य प्रश्नः,
खान-प्रश्नोऽपि युतः किं बहुना? ।।9।।
कुर्वते क्रूराः कदाचिद् किञ्चिद्,
कचकाः सन्ति च ते पिशुनाः ।।10।।
सम्पदः सन्ति विशेषाः देशे
किं तदा दीनाः समृद्धा विभुना ?।।11।।
उत्थितः संसदीह भूचालः,
शम्यते 'प्रेम' विन्दुना मृदुना ।।12।।

राष्ट्र में

व्यवस्था दी थी हमें जो मनु ने
मान्यता दी न उसे संसद ने ।।1।।
राष्ट्र का मान भी भुला ही दिया,
नीतियां भूली जो सिखाई गुरु ने ।।2।।
राम भी मान्य न आदर्श पुरुष,
उन्हें था मार्ग दिखाया रघु ने ।।3।।
राष्ट्र संस्कृति भी आज संकट में,
नष्ट की गंगा-यमुना हमने ।।4।।
सूर्य भी रोशनी नहीं देता,
नहीं वे कार्य, जो किये पृथु ने ।।5।।
लोक कल्याण लक्ष्य क्यों न बने?
बुद्धि तो दी ही है उन्हें प्रभु ने ।।6।।
स्वार्थ में लिप्त सदा क्यों रहते?
चित्त की ज्योति हरी क्या विधु ने? ।।7।।
कटुक वाक्यों से दुखी करते हैं,
नहीं सींची गिरा कभी मधु ने ।।8।।
आज काला धन लोक-प्रश्न बना,
कोयला भी लगा लिया तनु ने ।।9।।
क्रूर करते हैं कभी भी कुछ भी,
खा चुके चारा ज्यों खाया पशु ने ।।10।।
सम्पदा है अपार दीन कहां?
हमें समृद्ध बनाया विभु ने ।।11।।
बड़ा भूचाल उठा संसद में
प्रेम क्यों छोड़ दिया है मन ने ।।12।।

शतकानां शतकम्

कन्यातः कश्मीरं, खलु गुर्जराच्च कटकम्,
सम्प्रति गुञ्जति गगने, शतकानामिह शतकम् ।।1।।
सचिनं शंसन्ति जनास्तं महाशतकवीरम्,
विश्वस्मिन् क्रीडन्तंतह्येकमात्रपथिकम् पथिकम् ।।2।।
लोके प्रतिष्ठतेऽयं तेन्दुलकर आकाशे,
अर्हति स महायोद्धा, प्रतिपदवीं प्रतिपदकम् ।।3।।
कति कति वर्षाणि युतः, क्रिकेटखेलभूमौ,
कामये हृदा क्रीडेदेवं ह्यधिकादधिकम् ।।4।।
कथ्येत हि युगं युगं, महतीयं खेल कथा,
वन्देरन्नपि सर्वे, वामनकायं वटुकम् ।।5।।
वयं क्रिकेटे तं, पश्यामः श्रेष्ठतमम्,
खेले हि धावनानाञ्चानन्यतमं कृषकम् ।।6।।
कुत्रापि स्थितं भवेत्किल रत्नमेव रत्नम्,
वद कियत्परीक्षार्थं घृष्टव्यमिदं कनकम् ?।।7।।
व्यर्थेषु विवादेषु, स कदापि न संलग्नः,
कथयन्ति व्यवहारं श्लाघ्यं तं निष्कटुकम् ।।8।।
भारत-क्रिकेटार्थं, जीवनमर्पितं यतः,
विद्यते जनानां वै, तस्मै 'प्रेम' स्फटिकम् ।।9।।

शतकों का शतक

कश्मीर चलो कन्या से, गुजरात से चलो कटक ।
आकाश में गूंजा है शतकों का महाशतक ।।1।।
भूरिशः प्रशंसित हैं श्रीमान सचिन योद्धा,
जो आज खेलते हैं केवल वह एक पथिक ।।2।।
भूलोक में होकर भी, आकाश विराजे हैं,
पदवी छोटी उनको, छोटे हैं सभी पदक ।।3।।
मैदान क्रिकेट बहुत, वर्षो का साक्षी है,
मम यही कामना है वह खेलें अधिकाधिक ।।4।।
युग युग तक कहें इसे, महती है खेलकथा,
दिल से हैं वन्द्य बड़े यह वामन काय वटुक ।।5।।
हम आज देखते हैं, वह श्रेष्ठ श्रेष्ठतम हैं,
धावनकृषि के वह हैं, विश्व में अनन्य कृषक ।।6।।
हो रत्न कहीं पर भी, फिर रत्न रत्न ही है,
कितना परखोगे तुम?, निकलेगा कनक कनक ।।7।।
वह व्यर्थ विवादों में, संलग्न न रहे कभी,
व्यवहार श्लाघ्य उनका बोलते न कभी कटुक ।।8।।
भारत क्रिकेट हित में जीवन अर्पित उनका,
देता है विश्व उन्हें, अंतर का प्रेम घटक ।।9।।

जीवनम्

क्षणे पुष्पितं क्षणे द्वितीये भवति धरा-पतितम् ।
भवति रे! जीवनमनिश्चितम् ।।1।।
भवति जन्मना मङ्गलवेला,
जीवन यात्रा दर्शन मेला,
मुदितं मनो जन्मवेलायां तन्निधने रुदितम् ।।2।।
सुखं च दुःखं मनसा जातम्,
कदा सुखं दुःखं न ज्ञातम्,
सुखदुःखे आवर्तेते विधिना चक्रञ्चलितम् ।।3।।
मानवकायं भक्तिसाधनम्,
व्यर्थं क्रियते किन्तु जीवनम्,
तीर्थे मार्गे क्वचिदपि गात्रं कालेनाकलितम् ।।4।।
दंशति मनुजं विषयी नागः
भवति कदापि न मायात्यागः,
तरुणायते विषयमृगतृष्णा कायं जर्जरितम् ।।5।।
सत्यं शिवं सुंदरं वन्दे,
विचराम्यहं सर्वदानन्दे,
सत्यमेव हीश्वरो मन्यते इदं सर्वविदितम् ।।6।।
हरि 'प्रेम' मोचयति बन्धनात्,
कल्याणं कीर्तनाद् वन्दनात्,
एको गच्छति सर्वं त्यक्त्वा क्षणे क्षणे घटितम् ।।7।।
मायाग्रस्ते त्विह संसारे,
योजय चात्मानं ह्योंकारे
पश्यति नैव विभुं, तं नयनं मायासंवलितम् ।।8।।

जीवन

पुष्पित पल में, दूजे ही पल धरापतित देखा।
अनिश्चित है जीवन रेखा ।।1।।
घड़ी जन्म की मङ्गल बेला,
जीवन यात्रा दर्शन मेला,
मन है सुखी जन्म बेला में, मरे दुखित देखा ।।2।।
मन से पैदा दुःख और सुख,
ज्ञात नहीं भविष्य के सुख दुख
सुख दुख का है चक्र निरन्तर विधिचालित देखा ।।3।।
मानव-देह भक्ति का साधन,
व्यर्थ न करो नष्ट यह जीवन,
तीर्थ मार्ग यह गात कहीं भी काल कलित देखा ।।4।।
विषय-नाग डसता मनुष्य को,
माया वश देखे न लक्ष्य को,
तृष्णा तरुणी होती जाती, तन जरिष्ठ देखा ।।5।।
शिव सुंदर सत्य को भजेगा,
जीवन में आनंद मिलेगा
ईश्वर नाम सत्य का ही है, विश्व विदित देखा ।।6।।
ईश्वर प्रेम छुड़ाता बन्धन,
शुभ करते हैं कीर्तन वन्दन,
सब कुछ छोड़ अकेला जाता, यही घटित देखा ।।7।।
मायाग्रस्त जगत है सारा,
ओंकार जप आत्मा द्वारा,
ईश्वर कैसे दिखे नयन को मायांकित देखा ।।8।।

महार्घता

दुःखिनो हि देशवासिनोऽद्य चिन्तिताः ।
यन्त्रिता भवेन्महार्घता प्रवर्तिता ।।1।।
डीजलस्य मूल्यमेधते पुनः पुनः,
गेहनार्य एधवायुनैव मूर्च्छितताः ।।2।।
शाक-कंद-मूल-दुग्ध-तैल-शर्कराः,
मूल्यकूर्दनाद् विभान्ति खे प्रतिष्ठिताः ।।3।।
वस्तुमूल्यमद्य राक्षसीमुखायते,
शासनेन कीदृशाः वयं कृपान्विताः ?।।4।।
वस्त्रभोजनार्थमेव निर्धनाः जनाः,
मार्गयन्ति जीविकां क्षुधाप्रचोदिताः ।।5।।
हृद् विदीर्यते यदा दशाऽवलोक्यते,
ध्नन्ति कर्षकाः किमात्मनः सुदुःखिताः ।।6।।
सांसदाः विलोकयन्ति किन्न हा! व्यथाम् ?
चिन्तयन्ति किन्न राजनीतिपण्डिताः ? ।।7।।
नेतृभिर्हि केवलं तु भावदोहनम्,
तैः प्रपीड़िताः जनाः प्रपञ्चपिण्डिताः ।।8।।
प्रान्त-जाति-धर्म-सम्प्रदाय-भेदिभिः,
लोकतन्त्रभूर्जनैश्छलैः प्रवञ्चिताः ।।9।।
प्रार्थना कवेरियं हृदि प्रजायते,
राष्ट्रियां दशां प्रमार्जयेज्जगत्पिता ।।10।।

महंगाई

आज दुखी हैं सभी देखवासी चिन्तित हैं।
महंगाई जो बढ़ी भाव भी अनियन्त्रित हैं ।।1।।
बार बार बढ़ रहे मूल्य भी हैं डीजल के,
चढ़ी रसोई गैस गृहिणियां भी मूर्च्छित हैं ।।2।।
शाक दूध चीनी व तेल के मूल्य कूद कर,
आसमान तक चढ़े वहां पर ही स्थित हैं ।।3।।
सुरसा मुख की तरह बढ़े हैं वस्तुमूल्य तो,
सरकारी यह कृपा उसी से आनन्दित हैं ।।4।।
भोजन वस्त्र हेतु निर्धन जन चिन्तित, सारे
खोज रहे जीविका भूख से जो पीड़ित हैं ।।5।।
देख दशा उनकी फटता है हृदता दुःख से,
कुछ कर लेते आत्म हनन भी निज दण्डित हैं ।।6।।
सांसद भी क्यों नहीं समझते व्यथाकथा को
चिन्तन करते क्यों न राजनैतिक पण्डित हैं? ।।7।।
नेता मात्र भाव-दोहन में लगे हुए हैं,
जनता पीड़ित बेचारी प्रपंच पिण्डित है ।।8।।
जाति धर्म और प्रान्त भेद की चालें बेढब
लोकतंत्र के छल से जन, सुख से वञ्चित हैं ।।9।।
कवि के मन में यही प्रार्थना जाग रही है,
ईश सुधारें राष्ट्र-दशा, प्रभु जग-वन्दित हैं ।।10।।

कृषकः

ग्रीष्मे च शीतकाले कर्त्तव्यसाधकम् ।
कृषकं नमामि देवं तं सर्वसेवकम् ।।1।।
रात्रावपि मध्याह्ने, कुरुते स उद्यमम्,
जाने हि धरापृष्ठे श्रमसिद्धलेखकम् ।।2।।
पशुपक्षिकीटजन्तून् साधून् खलान् प्रजाः,
एको हि भोजयति तं जानामि पालकम् ।।3।।
"जीवानि परहितार्थं लोकाय कर्म कुर्वन्,"
यः शिक्षते तमीक्षे पुण्य-प्रचारकम् ।।4।।
आहुतिगृहीतिनीयं केदारयज्ञशाला,
होतारमहं वन्दे परमार्थयाज्ञिकम् ।।5।।
विघ्नैः प्रदूयते यदि दुर्भिक्षवृष्टिघातैः,
दैवाश्रितं हि जाने दुःखेऽपि मोदकम् ।।6।।
श्रयते सदैव सर्वान् नापेक्षते कदाचिद्,
प्रणमामि तं पृथिव्यां प्रस्तुत्यपावकम् ।।7।।
सर्वेभ्य एव तस्मिन् सद्भावना मनोज्ञा,
कथयानि किन्न तमहं भूलोक-धारकम्? ।।8।।
भूदेव! हृदा श्रद्धां तुभ्यं समर्पयामि,
बन्धो! गृहाण पूर्णं त्वं 'प्रेम' मामकम् ।।9।।

किसान

वर्षा शीत ग्रीष्म में, सदा कर्म साधक है ।
नमस्कार उसको किसान सबका सेवक है ।।1।।
रात्रि दिवस दोपहर सदा उद्यम करता है,
भूतल पर श्रम का वह सिद्धहस्त लेखक है ।।2।।
सज्जन दुष्ट कीटपशु पक्षी सभी प्रजाओं,
को देता है भोज्य वही जग का पालक है ।।3।।
परहित और लोकहित में जीवन यापन हो,
पुण्य हेतु वह सतत कर्म का सुविचारक है ।।4।।
खेत यज्ञशाला में आहुति श्रम की देता,
वन्दन कृषि होता का, वही परम याज्ञिक है ।।5।।
वृष्टि बाढ़ दुर्भिक्ष विघ्न से पीड़ित भी वह,
रामभरोसे दुख में भी सबका मोदक है ।।6।।
आश्रय सबको देता नहीं अपेक्षा भी ज्यादा हैं,
धराप्रणम्य किसान तपस्वी है पावक है ।।7।।
मन सद्भाव मनोज्ञ सभी के प्रति प्रभु जैसा,
क्यों न कहूं मैं धरा लोक का वह धारक है? ।।8।।
हे! भूदेव! समर्पित श्रद्धापुष्प हृदय के,
बन्धु! करो स्वीकार प्रेम मेरा माणिक है ।।9।।

अलीगढ़ नगरम्

को न जानीते, ह्यलीगढ़नगरम् ।
जगद्विख्यातं, सुतालकनिकरम् ।।1।।
नाति दूरे स्थितं तु दिल्लीतः,
चुम्बते मान-सफलता-शिखरम् ।।2।।
प्रदेशं दत्तं च नेतृत्वं-यथा,
चन्द्र-कल्याण सिंह नेतृवरम् ।
विश्वविद्यालय एव शिक्षायाः,
नयति छात्राय दक्षतावसरम् ।।4।।
जनाः जानन्ते विश्व-साहित्ये,
गीतकारं तं नीरजं मधुरम् ।।5।।
कविर्धत्ते स पद्मभूषणपदवीम्,
लिख्यते तेन सुकाव्यं प्रचुरम् ।।6।।
मान्यता मे यन्नीरजवेशे,
विद्यते वाणी स जीवेत्तु चिरम् ।।7।।
रवीन्द्रजैनेनापि सङ्गीते,
अलीगढ़नाम ध्वन्यते प्रखरम् ।।8।।
रेलमार्गस्थितं प्रधाने यत् ,
अन्यनगरैर्युतं हि तुष्टिकरम् ।।9।।
सेवमानो विभिन्न नगराणि,
इहायातोऽहं वै भजामि हरम् ।।10।।
शान्ति-कल्याणी-भावना-सहितः
प्रेमशङ्कर उपैति विघ्नहरम् ।।11।।

अलीगढ़ नगर

कौन जानता नहीं अलीगढ़ महानगर है?
यही विश्व विख्यात श्रेष्ठ तालों का घर है ।।1।।
अधिक नहीं है दूर राजधानी दिल्ली से,
चूम रहा है गगन सफलता मान शिखर है ।।2।।
निज प्रदेश को बार द्वव्य नेतृत्व दिया है,
चन्द्र समान किया कल्याण अमर है ।।3।।
शिक्षा केन्द्र विश्व विद्यालय भी मुस्लिम है,
छात्रों को योग्यता हेतु देता अवसर है ।।4।।
सभी जानते हैं हिन्दी साहित्य शिरोमणि,
गीतकार गोपालदास नीरज कविवर हैं ।।5।।
कवि को प्राप्त पद्यभूषण पदवी सम्मानित,
उनका काव्य स्रजन अद्भुत है मधुर प्रचुर है ।।6।।
कवि के वंश सुशोभित हैं साक्षात् सरस्वती,
मेरी है कामना बिताये जीवन चिर है ।।7।।
श्री रवीन्द्र जी जैन सुगायक गीतकार हैं,
उनका भी सङ्गीत क्षेत्र में कार्य प्रखर है ।।8।।
रेलमार्ग है मुख्य अलीगढ़ जंक्शन भी है,
सड़क मार्ग से भी नगरों से जुड़ा सफर है ।।9।।
सेवा कर विभिन्न नगरों में लौटा हूं मैं,
जीवन यापन करता कवि भजता हरिहर है ।।10।।
शांति सहित कल्याण भावना प्राणि मात्र की
गौरी सुत की शरण लिये उर में शंकर हैं ।।11।।

पण्डिताः

संस्कृतज्ञा उदाराः भवेयुः कथम्?
ते प्रगत्यै बुधाश्चिन्तयेयुः कथम् ?।।1।।
संस्कृते साम्प्रतं मूर्च्छनी दृश्यते,
पण्डिताश्चेतनां सञ्चरेयुः कथम् ?।।2।।
ते मिलित्वैव कुर्वन्ति यत्नान्न किम् ?
बुद्धिमन्तः स्नतिं मार्गयेयुः कथम् ?।।3।।
शोधकार्येष्वपि श्रेष्ठतापेक्षिता,
ताः पुराणीः प्रथा आचरेयुः कथम् ?।।4।।
ज्योतिषा दर्शनैः प्राप्य सम्पूर्णताम्,
पाठयेयुः पठेयुर्भजेयुः कथम् ?।।5।।
न प्रशंसन्ति विज्ञाः द्विषन्त्यैव ते,
उत्सहन्ते न तस्मात्तरेयुः कथम् ?।।6।।
विश्ववन्द्या सुभाषा पुरा संस्कृता,
गौरवं पूर्वकं धारयेयुः कथम् ?।।7।।
भारतं संस्कृतिं संस्कृतं वाङ्मयम्,
दिव्यतां नव्यतां साधयेयुः कथम् ?।।8।।
संस्कृत-प्रेम-संवर्धनं सम्भवेद्,
तद्धि सम्मेलनं योजयेयुः कथम् ?।।9।।

पण्डित

संस्कृत के ज्ञानी कैसे उदार हों जायें।
प्रगति हेतु चिन्तन रत होकर शुभफल पायें ।।1।।
सम्प्रति संस्कृत में मूर्च्छना दृष्टि गोचर है,
नई चेतना का कैसे संचार कराये ।।2।।
मिलकर करते हैं प्रयत्न क्यों न ही सभी वे?
बुद्धि विवेक लगायें तो फिर पथ भी पायें ।।3।।
शोध कार्य में भी श्रेष्ठता अपेक्षित महती,
प्रथा पुरानी नई आचरण में अपनायें ।।4।।
ज्योतिष दर्शन द्वारा मिले पूर्णता कैसे?
पारङ्गत हो पढ़ें प्रेम से इसे पढ़ायें ।।5।।
विद्वानों नहीं प्रशंसा, ईर्ष्या देखी?
अनुत्साह भी देखा, छोड़ें प्रीति बढ़ाये ।।6।।
संस्कृत भाषा विश्ववन्द्य संस्कारों वाली,
इसे पुराना गौरवमय स्थान दिलायें ।।7।।
भारत संस्कृति को, संस्कृत वाड्मय को,
नई ऊँचाई पर कैसे फिर से पहुंचाये ? ।।8।।
संस्कृत प्रेम बढ़े लोगो में यह सम्भव है,
सम्मेलन कर नई योज़ना नीति बनायें ।।9।।

मुम्बई

रत्नमध्ये यथा हीरकं द्योतते।
भव्यतायां तथा मुम्बई शोभते ।।1।।
तां धनाढयैः कलानायकैर्मण्डिताम्,
अर्थधानीमिमां भारतं वन्दते ।।2।।
वासिता पश्चिमे सत्तटे सागरे,
पूर्णविश्वं सुचित्रैर्मुदा मोदते ।।3।।
दुःखिता धर्षिता कैश्चनाऽतंकिभिः,
द्राक दृढीभूय दिव्या समुत्तिष्ठते ।।4।।
सोऽमिताभो महानायको बच्चनः,
पुत्रपत्नीयुतो भास्वरो विद्यते ।।5।।
धर्म-हेमर्षि-रेखा-दिलीपादयः,
नायकाः नायिकाः मुम्बयामासते ।।6।।
वासिभिर्देशिकैरागतैर्मुम्बयां
भारतस्यैकरूपं विनिर्मीयते ।।7।।
चित्रधान्यां लताशे भगिन्यावपि,
गायिकाभ्यां महासागरो राजते ।।8।।
निर्धनोऽप्यत्र गत्वा गुणैः काशितः,
लोक-राष्ट्रे धनैः सज्यते वन्द्यते ।।9।।
लेखकै-र्गातृ-सङ्गीतकारैर्बुधैः,
वेष्टिता प्रेमपूर्णाशया रोचते ।।10।।

मुम्बई

जैसे रत्नों में हीरे की चमक दिखाती।
उसी तरह मुम्बई सभी के मध्य सुहाती ।।1।।
नगरी धनिकों कला नायकों से मण्डित है,
भारत की यह अर्थ-राजधानी कहलाती ।।2।।
पश्चिम सागर के तट पर मुम्बई सुवासित,
सकल विश्व को अपनी फिल्मों से बहलाती ।।3।।
आतंकित की गई दुखी कुछ दुष्टों द्वारा,
किन्तु तुरंत खड़ी होकर देवी मुसकाती ।।4।।
श्री अमिताभ महानायक बच्चन जी,
कलाकार को सपरिवार मुम्बई बसाती ।।5।।
श्री धर्मेन्द्र, दिलीप, ऋषि, हेमा रेखा भी
नायक और नायिका मुम्बई सबको भाती ।।6।।
भारत भर के लोग यहां आकर रहते हैं
भारत का लघुरूप मुम्बई एक बनाती ।।7।।
बहिनें आशालता चित्रधानी में दोनों,
भारत रत्न लता इनमें भारत की थाती ।।8।।
निर्धन भी गुणवान प्रकाशित यहां हुए हैं,
आकर्षक मुम्बई अर्थ - सम्मान दिलाती ।।9।।
कवि-लेखक-गायक-संगीत-गीतकारों की,
सदाशया नगरी मुम्बई प्रेम बरसाती ।।10।।

इङ्गलकालिमा

संरुद्धमिदं कार्यं, बाधितमपि किं सदनम् ?
इङ्गालकालिमायं धूमायते हि गगनम् ।।1।।
दुर्भाग्यमिदं कथ्यं, कश्मलगाथा किं वा ?
राष्ट्रे व्याता चिन्ता, ग्रस्तं संसद्भवनम् ।।2।।
अनिवार्यं किं कलुषं शासने च सत्तायाम् ?
उत्कोचरताः के के कुरुते जनता प्रश्नम् ?।।3।।
किं राजनीतिरधुना वर्तते ह्यनर्थवती?
सत्यं व्यर्थं तेषामपि, राष्ट्रध्वजनमनम् ।।4।।
स्वार्थान्धाः किं सर्वे, पश्यन्ति न गरिमाणम्,
किं क्रान्तिकारिणां ते, वीक्षन्ति नात्महवनम् ।।5।।
नो न्याय-सत्य-भावास्तिष्ठन्ति व्यवहारे ?
किं कर्गजस्य नावा, वाञ्छन्ति नदीतरणम् ? ।।6।।
चित्तेषु नेतृणां किं रे! कोलाहलनीतिः ?
भिन्नं तेषां कथनं भिन्नं तेषां चलनम् ।।7।।
नास्ते कर्मसु शुचिता वाण्यां नो माधुर्यम् ?
हृद्भिर्हि भजन्ति न किं ते मनःकर्म-वचनम् ?।।8।।
स्थापयति जनानङ्के किं भ्रष्टाचारनिशा ?
किं सदाचारभूमौ तेषां न भवति शयनम् ?।।9।।
वन्देऽहं विनायकं गौरीं गौरीनाथम्
याचे हि प्रभोः शरणं स्यादीप राष्ट्रोन्नयनम् ।।10।।

कालिमा

क्यों कार्य रुका सारा बाधित क्यों हुआ सदन?
कालिमा कोयले की, धूमित कर रही गगन ।। 1।।
दुर्भाग्य कहें इसको या भ्रष्टाचार कहें ?
राष्ट्रव्यापी चिन्ता, संसद तक बढ़ी तपन ।। 2।।
अनिवार्य कलुष क्यों है, शासन में सत्ता में ?
रिश्वत ली किस किसने प्रश्नाकुल जन गण मन ।। 3।।
क्या हुई अनर्थवती, यह राजनीति धारा ?
क्या व्यर्थ हो गया है ? अब उनका ध्वजा नमन ? ।। 4।।
स्वार्थान्ध हो गये क्या, देखते न गरिमा भी,
क्या क्रान्तिकारियों का भूले हैं आत्म-हवन ? ।। 5।।
क्या झूंठ धूर्तता ही, आचरण शास्त्र इनका ?
कागज की नौका से, क्या सम्भव सिन्धु-तरण ?।।6।।
क्यों कोला हल प्रियता नेता रणनीति बनी?
करते हैं भिन्न कथन करते हैं भिन्न चलन ।।7।।
कर्मों में पुण्य नहीं, वाणी भी धन्य नहीं,
उर भाव अनन्य नहीं, मन कर्म न श्रेष्ठ वचन ।।8।।
क्यों भ्रष्टाचार निशा, निज अङ्क सुलाती है?
क्यों सदाचार-धरणी, पर उनका नहीं शयन ? ।।9।।
गौरी गौरी सुत की, वन्दना गजानन की,
प्रभुशरण चाहता हूँ, जिससे हो राष्ट्र यजन ।।10।।

संस्कृतम्

भुवि संस्कृतवाङ्मधुरा महिता।
इयमद्भुत-वेद-सुधा-सहिता ।। 1।।
ऋषि-सूक्त-निघण्टु-निरुक्त-कसा,
श्रुति-पिङ्गल-शास्त्र-सुमन्त्र-रसा,
डमरोर्ध्वनिरेव मृडेन यता।। 2 ।।
सुरभी रस-सागर-रत्नमयी,
मणि-मौक्तिक-हीरक-शुक्तिशयी,
ऋषिभिर्मुनिभिः कविभिर्मथिता ।। 3।।
जगति प्रवरा प्रखराऽतिपुरा,
इयमेव हि संस्कृति-यानधुरा,
शुचि-सत्य-शिवैर्नियमैर्यमिता।। 4 ।।
जनजीवनजालजरज्जयिनी
हृदये मृदुता मधुतोन्नयनी
मणिभिः खचिता कविभी रुचिता।। 5 ।।
इतिहास-कथोपनिषन्मरुतः
प्रवहन्ति यथाऽत्र विधा-सरितः
ननु संस्कृत-वाक् प्रतिभासविता ।। 6।।
हृदयं भरति श्रुति-मन्त्र-रसैः
मधुपूरित-झङ्कृत-शब्द-कशैः
किल संस्कृत-सोमलता-कविता ।। 7 ।।
कल-संस्कृत-वेगवती तरला,
श्रवणे मुरली वचने सरला,
अधुनाऽपि नवा युवती मुदिता ।। 8 ।।
रसवर्ण-सुधा-सित-पुष्करिणी,
सुर-ताल-लयैर्हि मनोहरिणी,
सदलङ्कृत-वृत्तवती वनिता।। 9।।
खलु संस्कृतवागिह धन्यतरी,
निज-पूर्वज-पावन-पुण्य-धरी,
शुभता-भरिता तमसो रहिता ।।10।।

गुरु प्रतीक है निर्मल आस्था का, अटूट विश्वास का और अपरिमित श्रद्धा का।
पत्थर में भगवान रहते हैं यह विश्वास है, आस्था है और श्रद्धा भी।
व्यक्ति के भीतर भी एक ऐसा मन-मन्दिर होता है,
जिसमें प्रतिष्ठापित किसी श्रद्धेय गुरु अथवा आराध्य ईश्वर
की छवि का साक्षात्कार कर लिया जाता है।
अन्तरात्मा का ज्ञान ही सच्चा गुरु-ज्ञान है और वही ईश्वर का साक्षात्कार है...

मीरा पब्लिकेशन्स
इलाहाबाद

गुरु प्रतीक है निर्मल आस्था का, अटूट विश्वास का और अपरिमित श्रद्धा का।
पत्थर में भगवान रहते हैं यह विश्वास है, आस्था है और श्रद्धा भी।
व्यक्ति के भीतर भी एक ऐसा मन-मन्दिर होता है,
जिसमें प्रतिष्ठापित किसी श्रद्धेय गुरु अथवा आराध्य ईश्वर
की छवि का साक्षात्कार कर लिया जाता है।
अन्तरात्मा का ज्ञान ही सच्चा गुरु-ज्ञान है और वही ईश्वर का साक्षात्कार है...

मीरा पब्लिकेशन्स
इलाहाबाद

9 788188 211852